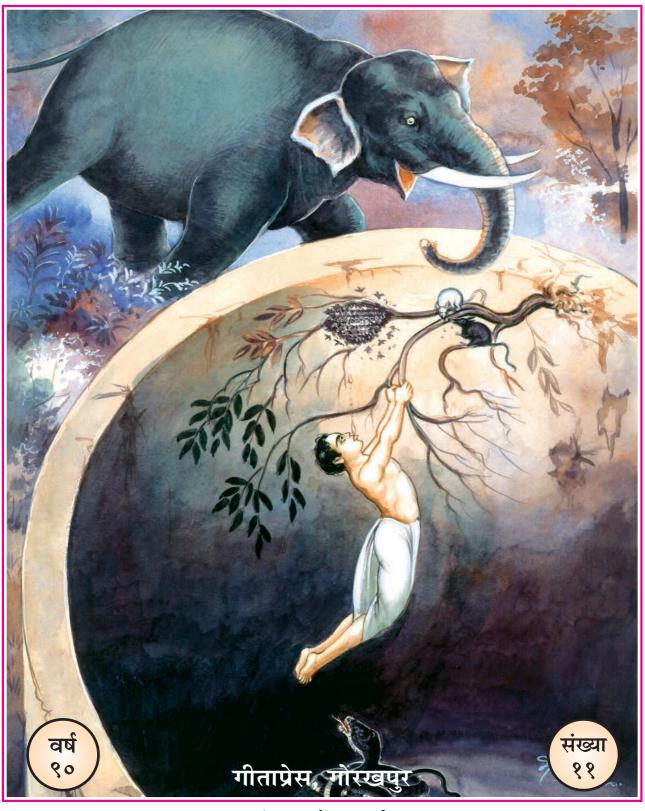
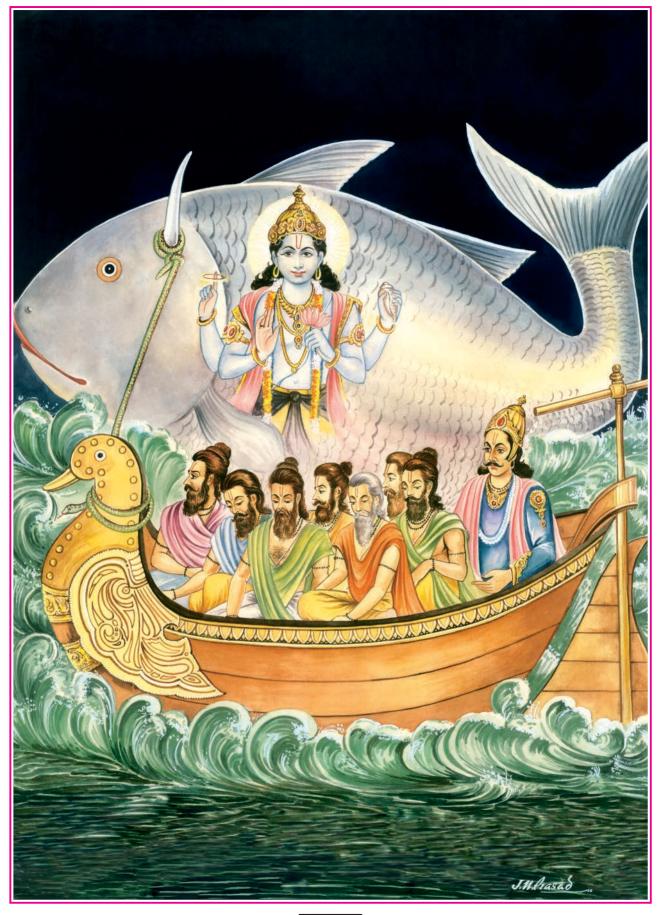
कल्याण



संसार-कूपमें पड़ा प्राणी





मत्स्यावतार

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः। नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्ये नमोऽस्तु ते॥ नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्ये ते नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥

वर्ष १० गोरखपुर, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, नवम्बर २०१६ ई० पूर्ण संख्या १०८०

मत्स्यावतार

₩	नामात्तक	લય	সঅ	મયા,	ब्रह्माजा	ानाद्रत	भय।	< <tr> <</tr>
45	सत्यब्रत	राजर्षि	हित,	श्रीहरि	मछली	बनि	गये॥	95
< ✓		×	×		×	×		< < <p>☆</p>
5 5	हरि हँसि			दिन, म		त्रैलोक्य	लय।	95
☆	एक होंति	हं सातहुँ	उदिध	ा, जगत	होहि	सब सलि	ालमय।।	₹
95	:	×	×		×	×		95
红		वस ज	•		पृथिबी	जलमय	सब।	<
5 5		ोका ए	•	र्हिषिनि र	पुँग [े] चढ़े	३ भूप	तब॥	95
☆		शफरी	सींग	प्रलय	जलमहँ	बिचरैं	हरि ।	< <tr> <</tr>
5 5	पूछे प जो जगम	ावन ।	प्रश्न	नृपतिने	अति	बिनती	करि॥	95
公	जो जगम	ाय जगरं				पुरु रूप	धरि।	< < - <! - <! - <! - <! - <!- <! - <! - <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- <!- </ </ </tr *** *** *** *** *** *** *** **
5 5	गुरुके गु	ह हरि	हो तुम	हिं, नाम	सुमिरि	ँबहु गये	तरि॥	95
公			J		Ğ	ु [श्रीप्रभुदत्तजी	ब्रह्मचारी]	<

राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ (संस्करण २,१५,०००) कल्याण, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, नवम्बर २०१६ ई० विषय-सूची पृष्ठ-संख्या पृष्ठ-संख्या विषय विषय १५- श्रीसिद्धारूढ स्वामी [संत-चरित] (ह० भ० प० श्रीलक्ष्मण रामचन्द्रजी पांगारकर)...... ३० ३- संसार-कृपमें पडा प्राणी [आवरणचित्र-परिचय] ६ १६- उदार व्यवहार हर स्थितिमें प्रसन्नतादायक ३२ ४- भगवानुके लिये काम कैसे किया जाय? १७- दानके दृष्टान्त [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टॉॅंटिया) (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ७ [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टाँटिया] ३३ १८- पापका फल (पं० श्रीआनन्दस्वरूपजी पाण्डेय) ३५ ५- परमार्थत: अजर-अमरके लिये रोना व्यर्थ (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ९ १९- हिंसाका कुफल (श्रीलीलाधरजी पाण्डेय) ३६ २०- मेरे वैरि-भावकी रक्षा करना ६- हे नाथ! हम तुम्हारे हैं (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) .. १० [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) ... ३७ ७- कलियुगका परम साधन (श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज) . १२ २१ - संन्यासका अर्थ ८- राजाको सीख......१४ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)...... ३९ ९- साधकोंके प्रति— (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) १५ २३- गोमूत्रमें छिपे जीवनसूत्र १०- प्रेमका पन्थ निराला है! (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) १८ [संकलनकर्ता—श्रीप्रशान्तजी अग्रवाल] ४० ११- पुण्यप्रदर्शनका फल : बालि-प्रसंग २४- साधनोपयोगी पत्र ४२ २५- व्रतोत्सव-पर्व [मार्गशीर्षमासके व्रतपर्व].....४४ (पं० श्रीरामिकंकरजी उपाध्याय) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता] २२ २६- व्रतोत्सव-पर्व [पौषमासके व्रतपर्व] ४५ १२- चित्त-शुद्धि (तत्त्वदर्शी महात्मा श्रीतैलंग स्वामीजी महाराज) .. २४ २७- कृपानुभूति ४६ १३- कहानीका असर [कहानी] (मास्टर श्रीपारसचन्दजी) २७ २८- पढो, समझो और करो ४७ चित्र-सुची १- संसार-कृपमें पड़ा प्राणी (रंगीन) ... आवरण-पृष्ठ ६- शबरीके अतिथि...... (इकरंगा) २१ ७- महात्मा श्रीतैलंग स्वामी (२- मत्स्यावतार..... ('') मुख-पुष्ठ ३- संसार-कूपमें पड़ा प्राणी...... (इकरंगा) ६ ८- श्रीसिद्धारूढ स्वामी (४- नृसिंह भगवान्की गोदमें प्रह्लाद (")७ ९- शाहजीकी उदारता.....(१०- काश्मीरनरेशकी न्याय एवं धर्मप्रियता.. (" ५- पुण्यका पावनको समझाना...... (")९ जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥ जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥ एकवर्षीय शल्क पंचवर्षीय शुल्क जगत्पते । गौरीपति विराट जय रमापते ॥ जय सजिल्द ₹२२० सजिल्द ₹११०० विदेशमें Air Mail) वार्षिक US\$ 50 (₹3000) Us Cheque Collection पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000) सजिल्द शुल्क Charges 6\$ Extra संस्थापक - ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक —राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित website: gitapress.org e-mail: kalyan@gitapress.org 09235400242/244 सदस्यता-शुल्क —व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें। Online सदस्यता-शुल्क -भुगतानहेतु-gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें। अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।

संख्या ११] कल्याण याद रखो-दूसरोंको सुख पहुँचाना, उनके आश्रयहीन दरिद्र है और मैं उसपर उपकार करनेवाला समर्थ कुपालु हूँ। असलमें सबको भगवानु ही देते हैं। दु:खको अपना दु:ख बनाकर अपना सुख उन्हें दे देना—इस प्रकारका क्षणभरका मनोरथ भी महान् तुम तो उसमें निमित्तमात्र हो। शुभकर्ममें भगवान्ने तुमको पुण्यरूप है। दूसरेके दु:खको सर्वथा अपना बना लेना निमित्त बनाया है, यह तुमपर उनकी विशेष कृपा है। तो अत्यन्त ही महत्त्वकी बात है, उसके दु:खका जरा-सभी रूपोंमें भगवान् हैं, यह समझकर भगवत्पृजाकी सा हिस्सा बँटाना भी बहुत बड़ा सौभाग्य है। इसीमें भावनासे गरीब, अपाहिज और रोगीकी खूब सेवा करो मानवताका विकास है। और भगवान्ने इन रूपोंमें आकर तुम्हारी सेवाको सत्पुरुषोंको दु:ख होता है, पर अपने दु:खसे नहीं, स्वीकार किया, इसे अपना परम सौभाग्य समझो। असलमें तुम्हारे पास तुम्हारा अपना है ही क्या? अपने दु:खकी उन्हें परवा ही नहीं होती। वे तो दूसरोंके दु:खसे ही दुखी होते हैं। इसी प्रकार निर्विकार सन्तोंकी सभी वस्तुएँ भगवानुकी ही हैं। तुम उन्हें अपनी मानकर सहज नित्य सुखरूपता भी दूसरेके सुखमें सुखका और अपनेको उनका दाता समझकर अभिमान करने अनुभव किया करती है। लगो तो यह तुम्हारी बेईमानी होगी। प्रभुकी वस्तु प्रभुके गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं-अर्पण हो और यह कार्य सुचारुरूपसे—सुव्यवस्थित रीतिसे हो, यही तुम्हारा कर्तव्य है। कर्तव्यसे चूकते हो संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना॥ तो तुम मालिकके अपराधी बनते हो। निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रविहं संत सुपुनीता॥ 'कवियोंने संत-हृदयकी तुलना नवनीतसे की, पर याद रखो-भगवान्की वस्तुओंको अपनी मानना वह ठीक बैठी नहीं; क्योंकि मक्खन तो स्वयं ताप बेईमानी, उन्हें अपनी बताकर किसीपर अहसान करना (गरमी) पाकर पिघलता है, लेकिन पवित्र-हृदय संत बेईमानी, अपनेको उनका दानी घोषितकर रोब गाँठना दुसरेके दु:खसे द्रवित हो जाते हैं।' बेईमानी और न देकर स्वयं मालिक बन बैठना तो सबसे इसीलिये संत पुरुष स्वयं विपत्तिका वरण करके बडी बेईमानी है। दूसरेको सुख पहुँचाया करते हैं। उनका जीवन होता ही यह सदा स्मरण रखो कि सब कुछ भगवानुका है इसीलिये, नहीं तो, उन आप्तकाम महात्माओंका है और सब भगवान्के रूप हैं। भगवान्की वस्तु, जगत्के कर्मप्रपंचसे क्या सम्बन्ध? भगवानुको जब जिस रूपमें जैसे जरूरत हो, उस रूपमें याद रखो—संसारमें उनका जीवन सर्वथा घृणित, वैसे ही देनेके लिये ही वह वस्तु तुम्हें सौंपी गयी है पापमय और निकृष्ट है, जो दूसरोंको दु:ख देनेके लिये और इस सेवाका तुम्हें सदा बदला मिलता रहता है— ही जीवन धारण करते हैं और उसीमें सुख तथा यहाँ 'योग-क्षेम' का निर्वाह होता है और मित-गित सफलताकी अनुभूति करते हैं। शुभ होती है। आगे इससे भी बहुत बड़ा पुरस्कार मिलनेवाला है, इस सेवाके बदलेमें मालिक स्वयं तुम्हें अपना आत्मदान करनेवाले हैं। इसलिये ईमानदारीसे याद रखो-भूखे गरीबको अन्न, नंगेको कपडा, रोगीको दवा तथा पथ्य और निराश्रयको आश्रय जरूर सेवा करनेमें कभी मत चूको। दो, परंतु मनमें ऐसा अभिमान कभी मत करो कि वह 'शिव' संसार-कूपमें पड़ा प्राणी देहका भार सम्हाले रहेंगे। कुँएके ऊपर मदान्ध गज उसकी प्रतीक्षा कर रहा है-बाहर निकला और गजने

आवरणचित्र-परिचय

मंड्रकसे भी अधिक अज्ञानके अन्धकारसे ग्रस्त हो रहा है। अहंता और ममताके घेरेमें घिरा प्राणी—समस्त

कितना भयानक है यह संसार-कूप-यह सूखा कुआँ है। इस अन्धकूपमें जलका नाम नहीं है। इस दु:खमय संसारमें जल-रस कहाँ है। जल तो रस है,

सत्यकी बात स्वप्नमें भी नहीं सोच पाता।

जीवन है; किंतु संसारमें तो न सुख है, न जीवन है। यहाँका सुख और जीवन—एक मिथ्या भ्रम है। सुखसे सर्वथा रहित है, संसार और मृत्युसे ग्रस्त है—अनित्य है।

मनुष्य इस रसहीन सूखे कुँएमें गिर रहा है। कालरूपी हाथीके भयसे भागकर वह कुँएके मुखपर उगी लताओंको पकड़कर लटक गया है कुँएमें। लेकिन कबतक लटका रहेगा वह ? उसके दुर्बल बाहु कबतक

लटका भी नहीं रह सकता। जिस लताको पकडकर वह भव-कूप—यह एक पौराणिक रूपक है, और है सर्वथा परिपूर्ण। इस संसारके कूपमें पड़ा प्राणी कूप-हैं, उन सीकरोंको चाट लेनेमें ही वह अपनेको कृतार्थ मान रहा है। यह न रूपक है, न कहानी है। यह तो जीवन है— चराचरमें परिव्याप्त एक ही आत्मतत्त्व है, इस परम

चीरकर कुचल दिया पैरोंसे। कुएँमें ही गिर जाता—कूद जाता; किंतु वहाँ तो महाविषधर फण उठाये फुत्कार कर रहा है। क्रुद्ध सर्प प्रस्तुत ही है कि मनुष्य गिरे और उसके शरीरमें पैने दन्त तीक्ष्ण विष उँडेल दें। अभागा मनुष्य-वह देरतक

लटक रहा है, दो चूहे-काले और श्वेत रंगके दो चूहे उस लताको कुतरनेमें लगे हैं। वे उस लताको ही काट रहे हैं। लेकिन मूर्ख मानवको मुख फाड़े सिरपर और नीचे खड़ी मृत्यु दीखती कहाँ है। वह तो मग्न है। लतामें लगे शहदके छत्तेसे जो मधुबिन्दु यदा-कदा टपक पड़ते

संसारके रसहीन अन्धकूपमें पड़े सभी प्राणी यही जीवन बिता रहे हैं। मृत्युसे चारों ओरसे ग्रस्त यह जीवन— कालरूपी कराल हाथी कुचल देनेकी प्रतीक्षामें है इसे। मौतरूपी सर्प अपना फण फैलाये प्रस्तुत है। कहीं भी

रात्रिरूपी सफेद तथा काले चूहे उसे कुतर रहे हैं। क्षण-क्षण आयु क्षीण हो रही है। इतनेपर भी मनुष्य मोहान्ध हो रहा है। उसे मृत्यु दीखती नहीं। विषय-सुखरूपी

मनुष्यका मृत्युसे छुटकारा नहीं। जीवनके दिन—आयुकी लता जो उसका सहारा है, कटती जा रही है। दिन और

संसारकूपे पतितोऽत्यगाधे मोहान्धपूर्णे विषयाभितप्ते । करावलम्बं मम देहि विष्णो गोविन्द दामोदर माधवेति॥

मधुकण जो यदा-कदा उसे प्राप्त हो जाते हैं, उन्हींमें

रम रहा है वह-उन्हींको पानेकी ही चिन्तामें व्यग्र है

जो मोहरूपी अन्धकारसे व्याप्त और विषयोंकी ज्वालासे सन्तप्त है, ऐसे अथाह संसाररूपी कूपमें मैं पड़ा तुर्सात व्हॅंगां डीको ध्रोड वर्धा बुद्धारके गोलिकड !/वेडदा बुक्ति ती महान ! Mayab हिन्मिने Tस्थिकी प्रसिद्ध हो प्रेसिने बडी / शिंड दा बुक्ति ती महान हो जिस्से हो प्रसिद्ध हो प्रसिद्ध हो प्रसिद्ध हो प्रसिद्ध हो प्रसिद्ध हो स्थापन हो स्य

भगवान्के लिये काम कैसे किया जाय? (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) प्रश्न—प्रसन्नतापूर्वक भगवान्का नाम समझकर (रहस्य) उनका रहस्य कौन जान सकता है? वे भगवानुको याद रखते हुए किसीसे भी रागद्वेष न करके सबमें समाये हैं, परंतु कोई उन्हें नहीं पकड़ पाता।

भगवानुके लिये काम कैसे किया जाय?

अपने कर्तव्यका पालन किस प्रकार किया जा सकता है? उत्तर—सब कुछ परमेश्वरका ही है, परमेश्वर ही खेल कर रहे हैं, परमेश्वर बाजीगर हैं, मैं उनका झमूरा हूँ, यों समझकर सब कुछ ईश्वरकी लीला समझते हुए, परमेश्वरके आज्ञानुसार आसक्ति और फलकी इच्छा छोडकर, परमेश्वरकी सेवाके लिये उन्हींकी प्रेरणा तथा शक्तिसे प्रेरित होकर कार्य करता रहे। यह समझकर बार-बार गद्गद होता रहे कि अहा! मुझपर परमेश्वरकी कितनी अपार दया है कि मुझ-जैसे तुच्छको साथ लेकर भगवान् अपनी लीला कर रहे हैं। भगवान्के प्रेम, दया, प्रभाव, स्वरूप और तत्त्वपर बारम्बार विचार करता हुआ मुग्ध होता रहे। इतना महत्त्व जानते हैं कि असंख्य ब्रह्माण्डके महेश्वर होते हुए भी अपनेको प्रेमीके हाथ बेच डालते हैं। महापामर हूँ, परंतु उस परम प्रभुकी मुझपर कितनी अपार

संख्या ११]

(प्रेम) भगवान्के समान कोई प्रेमी नहीं है, वे प्रेमका (दया) में कैसा नीच हूँ, कैसा निकृष्ट और दया है कि वे मुझको साथ लेकर लीला कर रहे हैं। प्रभुने सब पाप-तापोंसे बचाकर मुझे ऐसा बना लिया है। (प्रभाव) प्रभुके प्रभावका कौन वर्णन कर सकता है, वे चाहें तो करोड़ों ब्रह्माण्डोंको एक पलमें उत्पन्न कर सकते हैं। (स्वरूप) सारे संसारका सौन्दर्य मेरे प्रभुके एक रोमके समान भी नहीं है। वे आनन्दमूर्ति हैं। उनका दर्शन परम सुखमय है। वे चेतनामय महाप्रभु हैं। जैसे तारोंमें बिजली अनेक प्रकारसे कार्य कर रही है, वैसे ही प्रभुकी

श्रीराम-कृष्णके रूपमें अवतार लेते हैं।

थे और उनसे रथ हँकवाते थे, परंतु वे भी भगवान्के विश्वरूपको देखकर भय और हर्षके मिश्रित भावोंमें डूब गये। तब भगवान्ने कहा 'भय मत कर!' जबतक अर्जुनको भय हुआ, तबतक उन्होंने भगवान्के पूरे रहस्यको नहीं समझा। पहचानना तो वस्तुत: यथार्थमें प्रह्लादका था। जो भगवान् नृसिंहदेवको विकराल रूपमें देखकर भी बेधड़क उनके पास चले गये। प्रह्लादको

भेदका नाम ही रहस्य है। भगवान् श्रीकृष्णरूपमें प्रकट

हुए, उस रूपमें बहुत लोगोंने उन्हें भगवान् नहीं समझा।

कोई ग्वालबालक समझता था तो कोई वसुदेव-पुत्र। जो महात्मा पुरुष उनको भगवान्के रूपमें जान गये, उन्हींपर

उनका रहस्य प्रकट हुआ। प्रभुके रहस्यको जान लेनेपर

चिन्ता, दु:ख और शोकका तो कहीं नाम-निशान ही

नहीं रहता। प्रभु सब जगह विराजमान हैं, इस रहस्यको

जानना चाहिये। अर्जुन भगवान्के रहस्यको कुछ जानते

शक्ति सब कुछ कर रही है। वे विज्ञानानन्दघन परमात्मा किंचित् भी भय नहीं हुआ। इसी प्रकार परमात्माके सब जगह परिपूर्ण हैं। वे ही विज्ञानानन्दघन प्रभु रहस्यको जाननेवाला सर्वदा सर्वत्र निर्भय हो जाता है।

भाग ९० प्रश्न—जीवमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वह तो इसके लिये शोक करनेकी जरूरत नहीं है। कोई भी प्रभुके रहस्यको जान सके। जब प्रभु जनाते हैं, तभी जान काम दैव-इच्छासे हो जाय, उसमें चिन्ता या पश्चात्ताप सकता है। प्रह्लादको प्रभुने जनाया, तभी तो वे भगवानुको नहीं करना चाहिये। हमको अपने कृत्यकी भूलके लिये जान सके। वे हमलोगोंको अपना रहस्य किस उपायसे ही पश्चात्ताप करना उचित है। जना सकते हैं? हमको सूचना मिली कि यहाँ बहुत जल्दी बाढ़ उत्तर-इसके लिये प्रभुसे प्रार्थना करनी चाहिये। आनेवाली है, हट जाना चाहिये। इस बातको जानकर वे कृपा करके जना सकते हैं, परंतु यह नियम है कि भी हम नहीं हटे और हमारा सब कुछ बह गया तो हमें पात्र होनेसे प्रभु अपनेको जना देते हैं। भगवान्की दयापर पश्चात्ताप करना चाहिये; क्योंकि भगवान्ने हमको सचेत कर दिया था और हमने उसको माननेमें अवहेलना की।

हुई है।

पात्र होनेसे प्रभु अपनेको जना देते हैं। भगवान्की दयापर दृढ़ विश्वास करना चाहिये। भक्तशिरोमणि भरतजीने भी कहा था— जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलप सत कोरी॥ जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ॥

मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई। मिलिहिह राम सगुन सुभ होई॥ ऐसा दृढ़ भरोसा रखनेवालेकी प्रभु सम्हाल करते हैं। अतएव प्रभुसे सच्चे दिलसे ऐसी कातर-प्रार्थना करनी चाहिये कि 'हे नाथ! मैं अति नीच हूँ, किसी प्रकार भी पात्र नहीं हूँ। गोपियोंकी भाँति जिसमें प्रेमका

प्रकार भी पात्र नहीं हूँ। गोपियोंकी भाँति जिसमें प्रेमका बल है, उसके हाथ तो आप स्वयं ही बिक जाते हैं। हे प्रभो! मेरे पास प्रेमका बल होता तो फिर रोने और प्रार्थना करनेकी क्या जरूरत थी। मैं जब अपने अवगुणोंकी तथा बलकी ओर देखता हूँ तो मनमें कायरता और निराशा छा जाती है, परंतु हे नाथ!

प्राथना करनका क्या जरूरत था। म जब अपन अवगुणोंकी तथा बलकी ओर देखता हूँ तो मनमें कायरता और निराशा छा जाती है, परंतु हे नाथ! आपकी दया तो अपार है, आप दयासिन्धु हैं, पतितपावन हैं, मुझे वह बल दीजिये, जिससे मैं आपके रहस्यको जान जाऊँ।' कामको प्रभुका काम समझना चाहिये। हम लीलामयके साथ काम कर रहे हैं। इससे प्रभुकी इच्छाके अनुसार ही चलना चाहिये। यदि आसक्ति या स्वभावदोषके

हमलोगोंको तो स्वामीकी यही आज्ञा है कि बीज
र जहाँतक बने, उन्हें देते रहो। अतः हमको तो प्रभुके
न आज्ञानुसार ही करना चाहिये। उसमें कोई कसर नहीं
रखनी चाहिये। प्रभु अपनी इच्छानुसार करें। सेवकको
! तो प्रभुका काम करके हिषत होना चाहिये और मुस्तैदीसे
न अपने कर्तव्यपथपर डटे रहना चाहिये।
तो गुगथ्य कर ही लिया करते हैं। इसमें अपना
क्या वश है। कुपथ्य करनेपर सद्वैद्य रोगीको धमका तो

परंतु यदि अचानक बाढ आकर सब डूब जाय तो चिन्ता

करनेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि वहाँ हमारी भूल नहीं

बोनेके लिये किसानोंको बीज दिये, फिर बाढ आयी,

और वे बीज भी बह गये। इसपर हमलोगोंको न तो

शोक करना चाहिये और न यह विचार करना चाहिये

कि बीज तो बह ही रहा है, व्यर्थ देकर क्यों नष्ट करें।

देता है, परंतु नाराज नहीं होता। वह समझता है कि मेरी

एक जगह बाढ़ आयी, बीज बह गये। हमलोगोंने

लीलामयके साथ काम कर रहे हैं। इससे प्रभुकी इच्छाके पाँच बातोंमेंसे तीन तो इसने मान ली। दोके लिये फिर अनुसार ही चलना चाहिये। यदि आसिक्त या स्वभावदोषके चेष्टा करेंगे। वैद्य बारम्बार चेष्टा करता है, जिससे वह कारण उनकी आज्ञाका कहीं उल्लंघन हो जाय तो पुन: कुपथ्य न करे, परंतु चेष्टा करनेपर भी उसका हित न वैसा न होनेके लिये भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिये। हो तो वैद्यको उकतानेकी जरूरत नहीं है। न क्रोध ही अपनी समझसे कोई अनुचित कार्य नहीं करना करनेकी आवश्यकता है। फलको भगवान्की इच्छापर चाहिये। हमलोग किसीकी भलाईके लिये कोई कार्य कर छोड़ देना चाहिये और बिना उकताये प्रभुकी लीलामें रहे हैं और कदाचित् उससे उसकी कोई हानि हो जाय उनके इच्छानुसार लगे रहना चाहिये।

परमार्थत: अजर-अमरके लिये रोना व्यर्थ संख्या ११]

परमार्थत: अजर-अमरके लिये रोना व्यर्थ

(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

सम्बन्धियोंका कुछ भी ठिकाना नहीं है। कर्मवश जीवात्मा अनादिकालसे अनन्त योनियोंमें भटकता रहा है। उनमेंसे उसका अनेक देशों, कालों, व्यक्तियों एवं वस्तुओंसे सम्बन्ध बनता और बिगड़ता रहता है। भगवान्की मायाका यह वैचित्र्य है कि प्राणीको नये जन्मके ही कुछ व्यक्तियों एवं वस्तुओंका सम्बन्ध स्मृत रहता है; अन्यान्य जन्मोंकी सब बातें प्राय: भूल ही जाती हैं। अन्यथा जब अविवेकी प्राणी एक ही जन्मके सम्बन्धियोंको स्मरण करके उनके शोक-मोहमें डूबकर रोता रहता है, तब फिर सर्वका बोध रहनेपर तो किस-किसके दु:खपर कितना रोया जाय। इस सम्बन्धमें श्रीवसिष्ठजीने श्रीरामजीसे एक

श्रीभगवान् ही सार और सत्य वस्तु हैं। उन्हींसे

मुख्य सम्बन्ध मानना उत्तम है। संसारके अन्यान्य

दीर्घतपा नामक एक महर्षि अपनी पत्नीके साथ निवास करते थे। वे तपस्याके मूर्तिमान् स्वरूप थे। उनके पुण्य और पावन नामके दो पुत्र थे। समय बीतनेपर उनका ज्येष्ठ पुत्र पुण्य सम्यक् ज्ञानसे सम्पन्न हो गया, किंतु छोटा पुत्र पावन यथार्थ ज्ञान प्राप्त करनेमें असमर्थ रहा।

द्रष्टान्त देकर कहा-रघुनन्दन! महेन्द्र नामक पर्वतपर

महर्षि दीर्घतपाने यथासमय अपना शरीर त्याग दिया और माताने भी यौगिक क्रियाद्वारा महर्षिका अनुसरण किया। माता-पिताके दिवंगत हो जानेपर ज्येष्ठ पुत्र धैर्यपूर्वक

विवेकसे स्थिरचित्त हो अपना कर्तव्य करता रहा, किंतु

रागमें आसक्त पावनका चित्त शोकसे व्याकुल हो गया। पिताके मरनेपर शोकाकुल पावनको उसके भाई पुण्यने बतलाया है कि भैया, यह सब मायाका विलास केवल

बन्धुओंके लिये रोना चाहिये। फिर तो पिछले किन्हीं

ही हैं, परमार्थत: केवल सर्वसाक्षी सर्वाधिष्ठान ब्रह्म ही तत्त्व है। विचार करनेपर माता, पिता, बन्धु, सब कल्पना

व्यर्थ है। यदि ये वस्तुएँ हों, तो फिर जन्मान्तरके सभी

स्वप्न ही है। हम, तुम, संसार—ये सब कल्पनाएँ दुर्दृष्टि

है। अत: उसीमें प्रतिष्ठित होकर तद्भिन्नका संकल्प-चिन्तन

बर्फीले अश्म हुए। तालकन्दके भीतर तथा उदुम्बरके भीतरके कीट भी तुम हो चुके हो। इसी तरह कहाँतक गिनायें, कितने ही गिनायें तुम्हारे जन्म हुए हैं।

जन्मोंमें तुम सुपुष्पित वनस्थलीमें वृक्ष थे, कभी सिंह,

कभी मस्त्य, कभी वानर, कभी वनवायस, कभी गर्दभ

तो कभी पक्षी हुए थे, तबके बन्धुओंका भी स्मरण करो।

कभी विन्ध्यपर्वतपर पिप्पल हुए थे। कभी महावटके

घुण हुए थे, तो कभी मन्दराचलपर कुक्कुट हुए थे। फिर

मेरा भी यही हाल है, मैं भी त्रिगर्त देशमें शुक हुआ। फिर मेढक, फिर वनका लावक पक्षी, विन्ध्यमें पुलिन्द, चातक, व्याघ्र और फिर गृध्र बना और फिर सिंह। वही मैं

तुम्हारा अग्रज हूँ। विविध जन्म, विविध संसार, विविध चेष्टाएँ—सब-की-सब केवल भ्रान्ति हैं। कहना केवल

इतना है कि अनन्त जन्मोंके अनन्त सुख-दु:ख तथा सुख-दु:खकी सामग्रियों - बन्धु-बान्धवोंका कौन स्मरण करे,

और कौन कितना किस-किसके लिये रोना रोये, जब परमार्थत: आत्मा सदा अजर-अमर एकरस है, परमानन्द कूटस्थस्वरूप

छोडना ही श्रेयस्कर है।

हे नाथ! हम तुम्हारे हैं (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) यदि आप किसीको अपने मकानकी रजिस्ट्री कर सम्बन्ध बनायें। जब चाहें तब भज लें। जैसे चाहें वैसे दें और फिर उसपर अपना हक जमाने जायँगे तो आप भज लें। भगवान् सब तरहसे अपने हैं और अपनानेको निकाल दिये जायँगे। इसलिये उससे ममता आदि अपने-तैयार हैं। वे दोषोंपर ध्यान देते नहीं हैं। वे केवल गुणोंको देखते हैं। वे जरासे गुणपर रीझ जाते हैं और बड़े-से-आप निकल जायगी। यह तो जबतक भगवान्में ममता बड़े दोषोंको भूल जाते हैं। यह भगवान्का स्वभाव है। नहीं होती है, तभीतक यह जगत्की ममता हमारे पीछे पड़ी रहती है। जब भगवान् हमारे हो गये और हम इसलिये भगवानुका स्वभाव देखकर हम लोगोंको भगवान्के हो गये तो हमारी ममताकी सारी चीजें भगवान् स्वाभाविक ही उनका हो जाना चाहिये। यह जीवन जा रहा है। हम लोग यहाँपर इकट्ठे हुए हैं गंगाके तटपर। छीन लेंगे और हमारी सारी ममता सब जगहसे निकलकर यह इसलिये नहीं कि दो-तीन महीने सैर करना है। उन्हींमें जाकर केन्द्रित हो जायगी। यह जीवोंका सर्वोच्च लक्ष्य है। चाहे कोई इसे माने या न माने, परंतु जीव मसूरी और नैनीतालके बदले ऋषिकेशमें रहना बड़ा अच्छा है। गंगा-स्नान भी हो जायगा, कुछ सत्संग भी भगवान्का हो जाय तो उसकी सारी कामना, वासना, आसक्ति, ममता सब जाकर भगवान्के चरणोंमें समर्पित सुन लेंगे। कुछ महात्माओंके दर्शन भी हो जायेंगे। यह हो जाय। भगवान्का हो जाय। तुलसीदासजी कहते हैं-अच्छा है, बहुत अच्छा है तथापि जब जीवनकी ओर

या जगमे जहँ लगि या तनुकी प्रीति प्रतीति सगाई।

ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों होहिं सिमिटि इक ठाँई॥ (विनय-पत्रिका १०३) यह प्रार्थना बड़ी सुन्दर है। उन्होंने कहा-इस

जगत्में इस शरीरको लेकर जहाँतक प्रीति, प्रतीति और सगाई-प्रेम, विश्वास और आत्मीयता है, यह सारी-की-सारी प्रीति भगवान् राघवेन्द्रमें लग जाय। सारा विश्वास भगवान्में जाकर समर्पित हो जाय और सारा अपनापन-फिर भगवान् अपनी चीजको अपने-आप ठीक करेंगे।

आत्मीयता भगवान्से हो जाय। एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास। एक राम घन स्याम हित चातक तुलसीदास॥

(दोहावली २७७) दूसरे किसीका भरोसा नहीं, दूसरेका बल नहीं, दूसरेका विश्वास नहीं, दूसरा कोई है ही नहीं। एक

देखना है तो इतनेसे काम नहीं चलेगा। हमें तो जीवनको

ुसाक्रुपमंडक्ष्म Discord Server https://dsc.gg/dharma र्सिमिणोर्की रक्षी करनेक लिये ब्राह्म vinash/Sh

लगा देना है भगवान्की ओर, तभी हमारे जीवनकी वास्तविक सार्थकता है। यहाँ आकर हमें कुछ छोड़ना चाहिये और वह छोडनेकी एक ही चीज है अगर मनसे कर सकें कि जगत्की प्रीतिको छोड़ दें और भगवान्से प्रीति कर लें। विषयोंकी प्रीतिका परित्याग कर दें। यह होगा कैसे ? यह ऐसे होगा कि आप भगवान्के हो जायँ

सौंप दिया। वे एक दिन बैठे थे तो मनमें जरा-सा सांसारिक भाव आया तो बोले—महाराज! देखो, अब आपकी इज्जत आपके हाथ है। यह हृदय भवन प्रभु तोरा। यहाँ आय बसे बहु चोरा॥

तुलसीदासजी महाराजने अपने-आपको भगवान्को

उन्होंने कहा-भगवन्! यह शरीर आपका महल भगवान् ही हमारे हैं। यह भगवान् कैसे हैं ? जैसा आपका है। यहाँ चोर आ बसे हैं। आप लुट जायँगे। मुझे पता मन है, वैसे हैं। भगवान्से सम्बन्ध होनेमें जितनी सीधी नहीं। लुटें कैसे? जिस हृदयमें भगवान् बैठे हैं, जो हृदय बात है। वैसी जगत्में कहीं है ही नहीं। जिस रूपमें चाहे भगवान्का हो गया, वह लुटेगा कैसे?

हे नाथ! हम तुम्हारे हैं संख्या ११] आया और आकर कहा भगवान्से और पत्रिका दी। है। इन्द्रियाँ हमारे वशमें नहीं हैं। मन हमारे वशमें नहीं रुक्मिणीने उसमें लिखा था—नाथ! सिंहके भक्ष्यको है। हमारा जीवन नाना प्रकारके विघ्नोंसे परिपूर्ण है। शृगाल ले जाना चाह रहा है। आपकी वस्तुको शिशुपाल थोडा-सा जीवन है। किस बलपर, किस पुरुषार्थपर और ले जाना चाहता है। आप रक्षा नहीं करेंगे? और रही किस साधनाकी कीमतको लेकर हम भगवान्से कहेंगे मेरी बात तो आप यदि सौ जन्मोंतक नहीं मिलेंगे तो कि इसके बलपर हम आपको खरीद लेंगे। हमारे पास दूसरेकी ओर देखना नहीं है। मुझे तो आपकी ओर ही जो कुछ है, वह केवल दैन्य है। गरीबी है, दीनता है, देखना है। वह पत्रिका मिली त्यों ही भगवान्ने कोई सेना नालायकपना है। इस नालायकपनेपर वे रीझ जायँ तो वे इकट्ठा नहीं की। भगवान्ने दाऊजीको खबर नहीं की। रीझते हैं। यदि हम कहें—हम नालायक हैं, हम पतित वहाँ कितनी बडी सेना लिये चेदिराज, जरासन्ध आदि हैं, हम अधम हैं हमारे पास न पुरुषार्थ है। यामुनाचार्यजीने उपस्थित थे। कितनी अक्षौहिणी सेना थी वहाँपर! परंतु कहा— श्रीकृष्ण रुक्मिणीकी पुकार सुनकर उसकी रक्षाके लिये न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे। बस, दारुकको बुलाया और कहा रथ तैयार करो। रथसे अकिञ्चनोऽनन्यगतिः शरण्यं त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये॥ तुरंत चल दिये कि सवेरे पहुँचना है और रुक्मिणीको (श्रीआलवन्दारस्तोत्र २५) बचाना है। बादमें जब दाऊजीको पता चला कि अर्थात् न मैं धर्मनिष्ठ हूँ, न मैं भक्त हूँ, न ही मैं श्रीकृष्ण-श्यामसुन्दर अकेले गये हैं तब वे सारी सेना आत्मज्ञानी हूँ। मैं तो अधम हूँ। अकिंचन हूँ, अनन्यगति लेकर बादमें पहुँचे। भगवान् वहाँपर अकेले चले गये। हूँ और शरणागतरक्षक आपके चरणकमलोंकी शरण क्यों ? इसलिये कि भक्तकी पुकार थी। आया हूँ। आप बचाइये। जो उनका हो गया, जिसने कहा—मैं आपका हूँ अभूतपूर्वं मम भावि किं वा सर्वं सहे मे सहजं हि दु:खम्। उसकी रक्षाका सारा भार वे वहन करते हैं। कोई भी किन्तु त्वदग्रे शरणागतानां पराभवो नाथ न तेऽनुरूपः॥ पाप-ताप, कोई भी दूसरा उसकी ओर देख नहीं सकता (श्रीआलवन्दारस्तोत्र २८) हे नाथ! मेरे लिये यह कौन नयी बात है। मैंने तो है। जो उनका हो गया, उसकी ओर संसारके दोष, संसारके दु:ख, संसारके पाप देख नहीं सकते। इसलिये कितने दु:ख आजतक सहे हैं। और भी सह लुँगा, परंतु हम भगवान्के हो जायँ और यदि कहीं होनेमें देर लगे मैं आपके शरणमें आ गया फिर मैं यदि इन दोषोंके द्वारा हरा दिया गया—आपके सामने शरणागतका पराभव होना तब अपने-आपको जैसे चुम्बकके सामने लोहा चला जाय तो चुम्बक खींच लेता है, उसी प्रकार अपनेको आपके योग्य नहीं है-यह आपको शोभा नहीं देता। लोहा बना दें और अपनेको चुम्बकके सामने ले जायँ इसलिये अपने सारे दैन्यको लेकर, अपनी सारी और कहें। हे नाथ! मैं आ गया। आप अपने-आप खींच दीनताको लेकर, अपनी सारी अधमाईको लेकर, अपने लो। आप अपनी दयासे, अपनी करुणासे, अपनी प्रीतिसे, सारे पामरपनको लेकर, पापसे भरे जीवनको लेकर, मलसे अपने विरदको देखकर हमारी ओर झाँको और हमें ले भरे शरीरको लेकर हम भगवान्से कहें - हे नाथ! हम लो। हम प्रस्तुत हैं। आपके चरणोंमें समर्पित होनेके लिये तुम्हारे हैं। दूसरा हमारा कोई नहीं है। दूसरेकी हमें कोई हम आये हैं। जो कुछ होता है, सब उनकी कृपासे ही आशा नहीं है। तुम्हारी ही केवल आशा है। तब भगवान् होता है। हमारे पास कौन-सी कीमत है, जिसको देकर कहेंगे-तुम्हारा मल हम धो देंगे। तुम मेरी गोदमें आ

जाओ। तुम्हें पाप-तापसे मुक्त कर देंगे। तुम मेरे हो।

हम भगवान्को खरीद लेंगे। हमारे पास कौन-सा साधन

कलियुगका परम साधन (श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज) चम्पकोद्धासिकर्णं दोनोंके सुखमें कोई अन्तर नहीं। नवजलधरवर्णं विकसितनलिनास्यं एक अमीर खूब गुलगुले गद्देपर सोता है, एक विस्फुरन्मन्दहास्यम्। गरीब बाहर कंकड़ोंपर। सो जानेपर दोनों ही एक-से हैं। चारुबर्हावचूलं कनकरुचिदुकूलं न गरीबको कंकड़ोंकी सुधि रहती है, न अमीरको कमपि निखिलसारं नौमि गोपीकुमारम्॥ गुलगुले गद्देकी। यदि अमीरको चिन्ता है तो उसे वह

सभी शास्त्र कहते हैं कि भगवान्पर विश्वास

करो। सभी संत-महात्माओंका मत है कि भगवान्की शरण जाओ, तुम परम सुखी होओगे। तुम्हें अखण्ड

आनन्द प्राप्त होगा। अब प्रश्न यह है कि हमारे पास

रहनेको बढ़िया कोठी है, चढ़नेको मोटरें हैं, खानेकी भी सभी सामग्रियाँ और अप्सराओंके समान हमारी स्त्रियाँ

हैं, लाखों-करोड़ों रुपये हमारे बैंकमें जमा हैं, हम तो सभी प्रकार सुखी हैं, फिर हम भगवानुका भजन क्यों

करें ? हम क्यों भजन, सन्ध्यावन्दन, नाम-संकीर्तन और शास्त्राध्ययनके चक्करमें फँसें ? हमें दु:ख क्या है ? हमें भगवान्से क्या मतलब? आप ध्यानसे देखें तो संसारमें सुखी कौन है?

संसारी चीजोंसे सब प्रकारसे सुखी कौन हुआ है ? अमीर सेव-अंगूरोंको खाकर जितना सुखी होता है, एक किसान बजरीकी रोटियोंमें भी वही स्वाद पाता है।

आजसे बीस वर्ष पहले जिन रूखी रोटियोंको खानेमें मुझे जितना स्वाद आता था, आपसे सत्य-सत्य कहता हँ, उतना स्वाद आज बढिया-से-बढिया फलोंमें नहीं

आता। स्वाद चीजोंमें नहीं, स्वाद तो भूखमें है। जिस अमीरको भूख ही नहीं लगती, उसके लिये भाँति-भाँतिके व्यंजन मिट्टीके समान हैं और जिसे भूख लगती

है, उसे भुने हुए चनोंमें बादामोंका स्वाद आता है।

कहनेका मतलब यह है कि कुछ भी खाइये यदि आपको भूख है तो खानेकी सभी चीजोंमें आनन्द आयेगा और भूख नहीं तो सभी मिट्टी।

अपनी सूकरीके साथ भी उतना ही सुख पाता है। उन

इसी प्रकार सांसारिक सुखोंकी बात है। राजा जितना अपनी रानीके साथ सुख पाता है, एक सूकर गुलगुला गद्दा शूलकी सेजके समान है। अतः निद्रा भी गरीब-अमीरकी एक-सी है।

आप कहेंगे कि अमीरके पास बहुत-से नौकर हैं, धन है, मकान है, अन्न-जलकी बहुतायत है, वैद्य हैं, दवाएँ हैं, उसे डर नहीं; परंतु हमारे पास तो कुछ नहीं,

अतः हमें चोरका, दरिद्रताका, वर्षाका, भूख-प्यासका और बीमारीका डर है। यह बात भी ठीक नहीं। अमीरको भी सदा डर बना रहता है। इतनी बड़ी अँगरेज सरकार, जिसके राज्यमें कभी सूर्य अस्त नहीं होता था,

वह भी कई राष्ट्रोंको युद्धमें लगे देखकर भयभीत रहती थी। गरीब उतने बीमार नहीं होते जितने अमीर बीमार होते हैं। मेरे पास बडे-बडे अफसर आते हैं, बडे-बडे नामी वकील, खूब बड़े-बड़े जमींदार, ताल्लुकेदार। उनसे जब मैं कहता हूँ भाई! तुम ऐसा कठोर काम क्यों करते हो ? तब वे कहते हैं—'महाराज! हम दिलसे

नहीं चाहते कि ऐसा करें, किंतु क्या करें पेटके लिये सब कुछ करना पडता है। इसे न करें, तो खायें क्या?' इससे पता चलता है कि गरीब हो चाहे अमीर हो, लखपती

हो, राजा हो, पेटकी चिन्ता सभीको है। इससे सिद्ध यही हुआ कि खाने-पीने, विषय-भोग, निद्रा और आत्मरक्षाकी चिन्ता सबको समान है। अमीर सोना नहीं खाते और गरीब धूलि नहीं फॉॅंकते। इन सब बातोंमें सब समान

िभाग ९०

हैं। इन संसारी चीजोंसे किसीको पूर्णरूपसे सन्तोष न हुआ, न कभी होगा। चिन्तासे सभी दुखी होते हैं।

बीमारीका, मरनेका दु:ख सभीको समान होता है। अत: भगवान्के भजनमें अमीर या कंगालका कोई सवाल नहीं। भगवानुका भजन तो गरीब-से-गरीबको, अमीर-

संख्या ११] कलियुगका	परम साधन १३
******************	************************************
से-अमीरको, ब्राह्मणसे लेकर चाण्डालतकको सभीको	देखेंगे वे अपनी अशान्तिके कारण दु:ख पाकर भटक-
समानरूपसे करना है।	भटककर अन्तमें भगवान्की ही शरणमें आयेंगे। अन्तमें
भगवान्के भजनका फल विषयोंकी प्राप्ति नहीं है।	सबको वहीं आना है। वहाँ आये बिना किसीका
भगवान्के भजनका फल है, आत्मिक शान्ति। आन्तरिक	कल्याण नहीं।
आनन्द ।	अत: भगवान्का भजन कोई खास तरहके ही लोग
यदि एक सिपाही अपने सभी कामोंको भगवान्के	करें यह बात नहीं, भगवान्के भजनकी उन सभीको
लिये करता है, वह प्रभुके ऊपर विश्वास करके ही सब	जरूरत है, जो आन्तरिक शान्ति चाहते हैं, फिर चाहे
कामोंमें हाथ लगाता है। अपने वेतनके थोड़े ही रुपयोंमें	वे गरीब हों या अमीर, स्त्री हों या पुरुष अथवा ब्राह्मण
बाल-बच्चोंका पालन करके सन्तोषके साथ काम करता	हों या चाण्डाल। भगवान्की शरण सभीको लेनी होगी।
हुआ भगवान्का भजन करता है और उसका मालिक	दाल-भात वही खा सकता है, जिसे भूख हो। दाल-
जज लाखों रुपये पाता है, किंतु उसे ईश्वरपर विश्वास	भात खानेमें सरकारी नौकर, देशभक्त, स्त्री-पुरुष, ऊँच-
नहीं, आवश्यकतासे अधिक खर्च है, उसका इतनेमें भी	नीचका कोई भेद नहीं। जिसे भूखकी निवृत्ति करनी हो,
पूरा नहीं पड़ता तो वह सिपाही उस जजसे बड़ा है।	वहीं भोजन कर सकता है, इसी प्रकार भगवान्का भजन
भगवान्के भजनकी सभीको समान रूपसे आवश्यकता	भी सभी समानरूपसे कर सकते हैं। आप सैनिक हैं तो
है। भगवद्भजनसे आत्मिक तुष्टि होती है। जिसे भगवान्के	बन्दूक चलाइये, लड़ाईमें वीरतासे लड़िये, किंतु भगवान्को
ऊपर विश्वास है, उसे कभी कोई क्लेश नहीं। जनक	कभी न भूलिये। यदि आप परोकारी हैं तो हजारोंके
इसके उदाहरण हैं। मिथिलामें आग लगनेपर भी वे	भोजनका प्रबन्ध कीजिये, अनाथालय खोलिये, किंतु
कहते हैं—मेरे जाने आग लगो चाहे पानी बरसो, मुझे	भगवान्को सदा स्मरण रिखये। आप नौकर हैं तो
न आन्तरिक क्लेश है, न उद्वेग। इसके विपरीत जिन्हें	ईमानदारीसे नौकरी बजाइये, किंतु अपने सच्चे मालिककी
भगवान्पर विश्वास नहीं वे करोड़पति, अरबपति भी	स्मृतिको क्षण-भरके लिये भी न भुलाइये। सब काम
कभी आन्तरिक सुख नहीं पा सकते। विलायतमें एक	करते हुए—सभी प्रकारकी स्थितिमें रहते हुए भगवान्को
दियासलाईके व्यापारी थे। वे बहुत साधारण आदमीसे	न भूलिये। आपकी आन्तरिक शान्ति नष्ट न होगी। हरेक
बड़े धनी बन गये थे। अन्तमें उन्हें बहुत बड़ा घाटा हुआ	स्थितिमें आप सुखी रहेंगे।
और उन्होंने दु:खके मारे आत्महत्या कर ली। यदि आप	आजके युगमें हम सभी लोग ध्यानद्वारा भगवान्का
यह समझते हों कि भगवान्के भजन करनेवालोंके	भजन नहीं कर सकते। ध्यान करनेवाले विरले ही
चेहरेसे कोई अग्निकी ज्वाला निकलने लगेगी या वे	आजकल मिलेंगे; क्योंकि यह साधन सत्ययुगका है।
सहसा अमीर बन जायँगे, उनके कोठियाँ चल जायँगी,	समय ऐसा आ गया कि हम बड़े-बड़े यज्ञ-याग करके
यह ठीक नहीं है। भगवान्के भक्त गरीब भी हो सकते	भी भगवद्भजन नहीं कर सकते। आजकल शुद्ध सामग्री
हैं और धनी भी। वे होंगे हमलोगोंकी तरह हाथ-पैरवाले	नहीं, बड़ी आयु नहीं, उतना धन नहीं, हमें स्वतन्त्रता
साधारण मनुष्य ही, किंतु उनकी आन्तरिक शान्ति हमसे	नहीं। जंगल भी नहीं रहे। एक-एक तिल जमीनपर
लाखोंगुनी अधिक होगी।	सरकारका कब्जा हो गया। अत: यज्ञ-याग भी आज
आज हम सुनते हैं, रूसमें लोग भगवान्को नहीं	हमारे लिये असम्भवसे ही हो गये हैं। इस उपायसे
मानते, इससे वे सब बड़े सुखी हैं। मैं आपसे दावेके साथ	त्रेताके मनुष्य भगवदाराधन किया करते थे। भगवान्की
कहता हूँ कि वे बड़े दुखी हैं, बड़े अशान्त हैं और आप	विधिवत् पूजा भाँति-भाँतिकी सामग्रियोंसे होती है।

भगवत्-परिचर्या करके प्रायः भगवद्भजन करते थे। सभी श्रेणी, सभी वर्णके लोग समानरूपसे कर सकते हैं। हम कलियुगी जीव हैं, हमारे चित्तकी वृत्तियाँ तभी तो भगवान् व्यासजीने कहा है-स्वभावतः विषयोंकी ओर जाती हैं। हम अल्पबुद्धि हैं, कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः। हमारी छोटी आयु है, हमारे लिये तो प्राचीन महर्षियोंने द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात्॥ एक ही साधन बताया है—केवल भगवन्नाम-गुणका 'सत्ययुगमें जो फल ध्यानसे मिलता था, त्रेतामें जो कीर्तन। भगवान्के गुणोंका कीर्तन कीजिये, उनकी यज्ञोंसे और द्वापरमें जो अर्चापूजासे मिलता था, वही सुमधुर कथाएँ सुनिये, उनके नामोंका ताल-स्वरसे फल कलियुगमें केवल भगवन्नाम-कीर्तनसे मिलता है।' झाँझ-मृदंगके साथ कीर्तन कीजिये, साधुओंका संग अत: मेरी यह प्रार्थना है कि आप भगवन्नामकीर्तनको कीजिये। इसीसे आप परमसिद्धि प्राप्त कर लेंगे। मैं यह अपने जीवनका एक आवश्यकीय दैनिक कर्तव्य बना नहीं कहता कि संकीर्तन करनेके लिये आप अपने लीजिये। नहाने-खानेकी भाँति भगवन्नामकीर्तन भी कामोंको छोड़ दें। आप जिसे धर्म समझकर अपना आपके जीवनका एक परमावश्यक अंग बन जाय।

कर्तव्य मानकर कर रहे हैं, उसे करते जाइये, किंतु घण्टे-दो-घण्टे समय निकालकर भगवान्के नामोंका धर्म-प्रधान देशमें उत्पन्न हुए हैं। आप पश्चिमीय सब मिलकर या अकेले कीर्तन कीजिये। भगवानुके मंगलमय नामोंका श्रद्धापूर्वक जप कीजिये। नामप्रेमी अनुरागी सन्तोंका सत्संग कीजिये। भगवान्की दिव्य कथा सुनिये। यदि इन कामोंको आप सच्चे हृदयसे प्रेमपूर्वक करेंगे तो आपको निश्चय ही आत्मिक शान्ति मिलेगी। फिर आप न तो दु:खोंमें तड़फड़ायँगे और न संसारी सुखोंमें फूलकर कुप्पा ही बन जायँगे। आपको करनेसे आप सुखी होंगे, आनन्दित होंगे। कभी झूठ न सुख-दु:ख दोनों समान प्रतीत होंगे। आप अपने सभी बोलनेवाले अनुभवी सन्तोंका यह विश्वास है। यदि कामोंमें अपने इन भजनीय भगवान्का प्रत्यक्ष हाथ भगवान्पर विश्वास नहीं होता तो उन्हींसे प्रार्थना कीजिये देखेंगे। आप उन प्रभुके आनन्दमें मस्त हो जायँगे। कि 'प्रभो! हमें विश्वास कराओ' वे ही विश्वास भी

उसके लिये भी हमारे पास धन नहीं। द्वापरके लोग

विलास-प्रधान देशोंके निवासी नहीं हैं। आप भगवानुको कभी न भूलें। भगवान्पर विश्वास रखकर आप अपना कार्य करें। भगवान्के भजनसे उनपर विश्वास करनेसे क्या होता है, इसे मैं आपको ठीक तरहसे समझा न सकूँगा। आप विश्वास कीजिये, आपको स्वतः ही अनुभव होगा। भगवान्की शरणमें जानेसे, संकीर्तन

विशेषकर नवयुवकोंसे मेरी प्रार्थना है, आप इस

सर्वोपयोगी साधन है, जिसे गरीब, अमीर, स्त्री-पुरुष

भाग ९०

करायेंगे।

कलियुगमें भगवन्नाम-संकीर्तन ही एक ऐसा

-राजाको सीख-

एक राजाने किसी गाँवमें एक नया महल बनवाया। उस महलके बगलमें एक गरीब बुढ़ियाकी झोंपड़ी थी। उस झोंपड़ीका धुआँ राजाके महलमें जाता था। इसलिये राजाने बुढ़ियाके पास सिपाही भेजकर उसे

आज्ञा दी कि वह अपनी झोंपड़ी वहाँसे हटा ले। बुढ़ियाने इनकार कर दिया। सिपाहियोंने बहुत डाँटा-फटकारा, पर वह नहीं मानी। तब उसे राजाने बुलाकर पूछा कि—'तू झोंपड़ी क्यों नहीं हटाती?' उसने कहा—'महाराज! मैं तो आपका इतना बड़ा आलीशान महल देख सकती हूँ, जरा भी नहीं जलती और आपकी

आँखोंमें मेरी टूटी-फूटी फूसकी मढ़ैया भी खटकती है। यही क्या आपका न्याय है?' राजा सुनकर लज्जित होभा**गरा**ui**और छिद्धिरा**ट**ाईका**v*सन्ता*क्ताकुकारकेद्ध्यकुरोक्षिकाकाका क्रियDE WITH LOVE BY Avinash/Sh

साधकोंके प्रति— संख्या ११] साधकोंके प्रति— (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) भगवान् कहते हैं— हमारी जातिके हैं, ये हमारी जातिके नहीं हैं-यह जो भेद बनाया हुआ है, यह जीवकी रची हुई सृष्टि है। मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय। शरीर भगवानुका रचा हुआ है और उसके साथ सम्बन्ध मिय सर्विमिदं प्रोतं सूत्रे मिणगणा इव॥ जीवका रचा हुआ है। यह सम्बन्ध जीवकी सृष्टि है, (गीता ७।७) जो दु:ख देती है। जीव जिनके साथ अपना सम्बन्ध नहीं 'हे धनंजय! मेरेसे बढ़कर इस जगत्का दूसरा कोई किंचिन्मात्र भी कारण नहीं है। जैसे सूतकी मणियाँ जोड़ता, उनसे दु:ख नहीं होता। राग और द्वेष ही जीवके स्तके धागेमें पिरोयी हुई होती हैं, ऐसे ही सम्पूर्ण जगत् शत्रु हैं-'तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ' (गीता ३।३४)। मेरेमें ही ओतप्रोत है।' जीव राग और द्वेष कर लेता है, मेरा और तेरा कर लेता है, यही वास्तवमें जीवको दु:ख देता है। यह मेरा और तात्पर्य है कि जैसे सूतकी मणियाँ हैं, सूतका ही धागा है, सब सूत-ही-सूत है, ऐसे ही संसारमें मैं-ही-तेरा, ठीक और बेठीक, अनुकूल और प्रतिकूल, ये हमारे मैं हूँ अर्थात् मेरे सिवा कुछ नहीं है। अत: भगवान्की हैं और ये तुम्हारे हैं—यह दशा जीवने धारण की है और दुष्टिसे भी संसार भगवत्स्वरूप है और महात्माओंकी इसीसे इसको दु:ख पाना पड़ता है। दृष्टिसे भी संसार भगवत्स्वरूप है—'वासुदेव: सर्वीमिति' ईश्वरके रचित तो स्त्री-पुरुषोंके शरीर हैं। सबके (गीता ७।१९)। फिर यह संसार कहाँ है? भगवान् शरीर ईश्वरकी प्रकृतिसे बने हुए हैं। इनके मालिक तो कहते हैं कि जो अपरा प्रकृति है, उससे एक विलक्षण हैं परमात्मा और धातु चीज है प्रकृति। अत: यह सृष्टि न दु:ख देनेवाली है और न सुख देनेवाली है। अगर मेरी परा प्रकृति है, जिसको जीव कहते हैं। उस जीवने जगत्को धारण कर रखा है—'ययेदं धार्यते जगत्' देखा जाय तो यह सृष्टि इसके व्यवहारको सिद्ध करती (गीता ७।५)। अतः जगत्से सम्बन्ध-विच्छेद करनेका है, इसकी मदद करती है। दु:ख तो वहीं होता है, जहाँ दायित्व जीवपर ही है। जीवका धारण किया हुआ जगत् मेरा-तेरा पैदा कर लेते हैं और यह मनुष्यका बनाया ही इसके दु:खका हेतु है। अब इसको समझानेके लिये हुआ है—'ययेदं धार्यते जगत्।' जीव जगत्को धारण एक बात कहता हूँ, आप ध्यान दें। करता है, इसीसे सुख होता है, दु:ख होता है, बन्धन शास्त्रोंमें आया है कि सृष्टि दो तरहकी है। एक होता है, चौरासी लाख योनियोंकी प्राप्ति होती है— भगवान्की रची हुई सृष्टि है और एक जीवकी रची हुई **'कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु॥'** (गीता सृष्टि है। भगवानुकी रची हुई सृष्टि कभी किसीको १३।२१)। सत्त्व, रज, तम—तीनों गुण तो बेचारे पड़े दु:ख नहीं देती। उसने कभी दु:ख दिया नहीं, कभी रहते हैं, कोई बाधा नहीं देते, परंतु इनका संग करनेसे दु:ख देगी नहीं और कभी दु:ख दे सकती भी नहीं। जीव ऊर्ध्वगति, मध्यगति अथवा अधोगतिमें जाता है

अर्थात् सत्त्वगुणका संग करनेसे ऊर्ध्वगतिको, रजोगुणका

संग करनेसे मध्यगतिको और तमोगुणका संग करनेसे

अधोगतिको जाता है। गुणोंका संग यह स्वयं करता है।

अपरा प्रकृति किसीके साथ कोई सम्बन्ध नहीं करती।

सम्बन्ध न प्रकृति करती है, न गुण करते हैं, न इन्द्रियाँ

करती हैं, न मन करता है, न बुद्धि करती है। यह स्वयं

भगवानुकी रची हुई सुष्टि अगर जीवको दु:ख देगी तो

जीव दु:खसे कभी छूट सकेगा ही नहीं। तो फिर दु:ख

कौन देता है? जीवकी बनायी हुई सृष्टि ही दु:ख देती

है। जीवकी बनायी हुई सृष्टि क्या है? यह मेरी माँ है,

मेरा बाप है, मेरी स्त्री है, मेरा बेटा है, मेरा भाई है, मेरी

भौजाई है, ये हमारे पक्षके हैं, ये दूसरोंके पक्षके हैं; ये

भाग ९० ****************************** ही सम्बन्ध करता है, इसीलिये सुखी-दु:खी हो रहा है, भगवान्ने बड़ी कृपा करके दो बात कह दी कि तुम जन्म-मरणमें जा रहा है। जीव स्वतन्त्र है; क्योंकि यह **'निर्ममो निरहङ्कारः'** हो जाओ, केवल अपनी बनायी परा (श्रेष्ठ) प्रकृति है। वह तो बेचारी अपरा प्रकृति है। हुई अहंता और ममताको मिटा लो तो ज्ञान हो जायगा, वह कुछ नहीं करती। उससे सम्बन्ध जोड़कर उसका पूर्णता हो जायगी। यह अहंता-ममता आपकी बनायी सदुपयोग-दुरुपयोग करके, ऊँच-नीच योनियोंमें जाते हैं, हुई है। पहले जन्ममें और जगह ममता थी, इस जन्ममें भटकते हैं। यह 'ययेदं धार्यते जगत्' का अर्थ हुआ। और जगह ममता है। इस शरीरमें रहते हुए भी आप अपनेको सुख-दु:ख किसका होता है? हमारा मकान बदल देते हो, सम्बन्ध बदल देते हो, दुकान बदल कोई सम्बन्धी है, प्रेमी है, वह मर जाता है तो दु:ख देते हो, अपना बना लेते हो और फँस जाते हो। अत: होता है और जी जाता है, अच्छा हो जाता है तो सुख आपने ही इसको जगत्-रूपसे धारण कर रखा है। होता है। यह मेरापन और तेरापन मनुष्यका बनाया हुआ परमात्माकी दृष्टिमें यह जगत् नहीं है। महात्माकी है। यदि मनुष्य निर्मम और निरहंकार हो जाय, न दृष्टिमें भी यह जगत् नहीं है। अगर अहंता-ममता छोड़ प्रकृतिके साथ ममता रखे, न अहंता रखे तो दु:ख मिट दो तो जगत् नहीं रहेगा, दु:ख मिट जायगा। जायगा और शान्ति प्राप्त हो जायगी—'निर्ममो निरहङ्कारः श्रोता—स्वयंमें कर्तापनका भाव आ जाता है! स शान्तिमधिगच्छति॥' (गीता २।७१) यह कर्मयोगकी स्वामीजी—हाँ, उसको आप ही स्वयंमें लाते हैं। दृष्टिसे है। ज्ञानयोगकी दृष्टिसे निर्मम-निरहंकार होनेपर यह मेरा है, यह तेरा है; यह मेरे अनुकूल है, यह मेरे ब्रह्मप्राप्तिका पात्र हो जायगा—'**अहङ्कारं बलं दर्पं** प्रतिकूल है; यह हमारे पक्षका है, यह दूसरे पक्षका है; यह कामं क्रोधं परिग्रहम्। विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय हमारे सम्प्रदायका है, यह दूसरे सम्प्रदायका है—यह अपना कल्पते॥' (गीता १८।५३) भक्तियोगकी दृष्टिसे निर्मम-खुदका ही बनाया हुआ है। इसलिये इसका त्याग करनेका निरहंकार होनेपर सुख-दु:खमें सम हो जायगा, क्षमावान् दायित्व जीवपर है। अगर यह परमात्माका बनाया हुआ हो जायगा और भगवान्का प्यारा हो जायगा—'निर्ममो होता तो इसके त्यागका दायित्व परमात्मापर होता। निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।' (गीता १२।१३) परमात्माकी बनायी सृष्टिमें उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय इस तरह कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग—तीनोंसे आदि जो कुछ होता है, वह आपमें बिलकुल दखल नहीं मनुष्य निर्मम और निरहंकार हो जाता है। देता। वस्तुएँ आपके व्यवहारमें काम आती हैं, आपपर यह ममता और अहंता हमारी बनायी हुई है। यह कोई बन्धन नहीं करतीं, आपको परवश नहीं करतीं, जीवकृत सृष्टि है। जीवकृत सृष्टि ही जीवको दु:ख देती परतन्त्र नहीं करतीं। आप खुद ही उनमें अहंता-ममता करके फँस जाते हैं। अत: 'ययेदं धार्यते जगत्' का है, बाँधती है। जीव स्वयं ही सृष्टि बनाकर बँधता है। जैसे रेशमका कीड़ा रेशम बनाकर उसमें बँध जाता है, तात्पर्य है कि बन्धन आपका ही बनाया हुआ है। उसमें ही फँसकर मर जाता है, इसी तरहसे जीवने अपना सत्त्व, रज और तम—इन तीनों गुणोंसे जीव मोहित जाल बुन लिया, राग और द्वेष कर लिया। इसीसे यह हो जाता है—'त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।' फँसा हुआ है, बँधा हुआ है। इसीने जगत्को धारण कर (गीता ७। १३) सात्त्विकी, राजसी और तामसी वृत्तियोंसे रखा है। जगत्की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। कारणरूपसे मोहित होकर जीव उनमें फँस जाता है, परंतु न सात्त्विकी देखें तो प्रकृति है और मालिकरूपसे देखें तो परमात्मा वृत्ति हरदम रहती है, न राजसी वृत्ति हरदम रहती है और है। बाँधनेवाला जगत् तो जीवने ही बना रखा है। यदि न तामसी वृत्ति हरदम रहती है। गुणोंका तो नाशवान् यह निर्मम और निरहंकार हो जाय तो निहाल हो जाय! स्वभाव है, उनका नाश होता ही रहता है। आप कितना

संख्या ११] साधकोंके प्रति— १७ ही अच्छा मानो, गन्दा मानो; भला मानो, बुरा मानो, जगदव्यक्तमूर्तिना' (गीता ९।४), 'येन सर्विमिदं कैसा ही मानो, वे गुण तो नष्ट होते ही हैं। उनमें ततम्' (गीता ८।२२; १८।४६)। ये बातें याद कर लेनेमात्रकी नहीं हैं। याद करोगे तो जैसे मैं व्याख्यान परिवर्तन तो होता ही रहता है। आप ही सम्बन्ध जोड़ करके उनको पकड़ लेते हो। परा, श्रेष्ठ प्रकृति होते हुए देता हूँ, वैसे आप भी दे दोगे, पर उससे कल्याण नहीं भी आपने अपरा प्रकृतिको धारण कर रखा है, जन्म-होगा। ये बातें मूलमें समझनी हैं कि हमें इसमें फँसना मरणको धारण कर रखा है, महान् दु:खको धारण कर नहीं है, मैं-मेरा नहीं करना है। 'मैं अरु मोर तोर तै रखा है। आप छोड़ दो तो छूट जायगा। प्रत्यक्ष उदाहरण माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया॥'(रा०च०मा० है कि आपकी कन्या बड़ी हो जाती है तो चिन्ता होने ३।१५।२) मैं और मेरा, तू और तेरा, यह और इसका, लगती है और जब घर-वर अच्छा मिल जाता है तथा वह और उसका—यही बन्धन है, जो जीवका बनाया आप कन्यादान कर देते हो तो आपकी वह चिन्ता मिट हुआ है। इसको वह छोड़ दे तो निहाल हो जाय। जाती है। कन्या वही है, आप वही हो, सृष्टि वही है, जबतक मैं और मेरेपनको धारण किये रहोगे, तबतक दु:ख नहीं मिटेगा। यह मैं-मेरापन ही खास पर आपको चिन्ता नहीं है। कारण कि जबतक 'मेरी है' तबतक चिन्ता है और अब, 'मेरी नहीं है' तो अब चिन्ता बन्धन है। नहीं है। तात्पर्य है कि अपनी अहंता और ममतासे ही में मेरे की जेवरी, गल बँध्यो संसार। दु:ख होता है। दास कबीरा क्यों बँधे, जाके राम अधार॥ अहंताको लेकर 'मैं साधु हूँ, मैं ऐसा हूँ, मेरेको सब बन्धनोंकी एक ही चाबी है-मैं-मेरेका ऐसा कह दिया, मेरेको ऐसा कर दिया'-यह आफत त्याग। मैं-मेरेको त्याग दो तो बन्धन है ही नहीं। किसने पैदा की है? हम ऐसे-ऐसे हैं, हम पढ़े-लिखे श्रोता—पहले ममताका त्याग होगा या अहंताका? हैं; हम कौन हैं, समझते हो आप? यह आफत आपने स्वामीजी-आपकी मरजी आये सो कर लो। ही बनायी है। आपने ही अपमान पकड़ लिया, मान ममताका सर्वथा त्याग कर दो तो अहंताका त्याग हो पकड़ लिया, महिमा पकड़ ली, निन्दा पकड़ ली, जायगा और अहंताका सर्वथा त्याग कर दो तो ममताका अनुकूलता पकड़ ली, प्रतिकूलता पकड़ ली। यह त्याग हो जायगा। जो आपको सुगम पडे, वह कर लो। आपकी ही पकड़ी हुई है। आप न पकड़ो तो कोई दु:ख एकका त्याग करो तो दूसरेका त्याग अपने-आप हो देनेवाला है नहीं, हुआ नहीं, होगा नहीं, हो सकता नहीं। जायगा। अहंताके साथ ममता और ममताके साथ अहंता अपनी सृष्टि बनाकर आप ही फँस गये। आपने ही रहती है। ममताका त्याग करो तो अहंता सर्वथा चली जगत्को धारण कर लिया, नहीं तो भगवान् कहते हैं कि जायगी और अहम् ही छोड़ दो तो ममता कहाँ टिकेगी? सब कुछ मेरेसे ही व्याप्त है—'मया ततमिदं सर्वं आप करके देख लो। यस्या बीजमहङ्कृतिर्गुरुतरं मूलं ममेतिग्रहो भोगस्य स्मृतिरङ्कुरः सुतसुताज्ञात्यादयः पल्लवाः। स्कन्धो दारपरिग्रहः परिभवः पुष्पं फलं दुर्गतिः सा मे ब्रह्मविभावनापरशुना तृष्णालता लूयताम्।। जिसका बीज अहंकार है, 'यह मेरा है' इस प्रकारका आग्रह ही गुरुतर मूल है, अंकुर विषय-चिन्तन है, पुत्र, पुत्री, जाति आदि पत्ते हैं, स्त्री-संग्रह स्कन्ध हैं, अनादर पुष्प है और फल दुर्गति है, वह मेरी तृष्णारूपिणी लता ब्रह्मविभावनारूपी परशुसे छिन्न हो।

प्रेमका पन्थ निराला है! (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) जरा-सा भी पत्ता खटकता है कि शबरी चौंक दे डाला जाता है। वहाँ ज्ञान, कर्म, उपासना, व्रत, नियम, पड़ती है कहीं उसके राम तो नहीं आ रहे हैं! थोड़ी-उपवास-सभी एक किनारे खड़े रह जाते हैं! वहाँ तो

वह मतवाला प्रेमी प्रेमास्पदपर एकछत्र साम्राज्य जमा

सी भी आवाज हुई कि वह सोचने लगी शायद उसके प्रियतम भगवान् राम आ रहे हैं! बार-बार कुटियासे बैठता है। सब कुछ देकर सब कुछ खरीद लेता है। प्रेमकी झीनी-सी जंजीरमें प्रेमस्वरूप सच्चिदानन्दको ही

बाहर जा-जाकर वह मार्ग देख आती है। उनके मार्गपर उसके पलक-पाँवड़े बिछे हुए हैं। उसे अपने गुरुदेव

मतंग ऋषिके इस वाक्यपर पूर्ण विश्वास है कि श्रीराम एक दिन अवश्य ही उसकी कुटियापर अपनी चरण-

रज बिखेरने आयेंगे। इसी विश्वासके बलपर तो वह इतने कालसे चुपचाप उनके आगमनकी पावन प्रतीक्षामें अपना

समय बिता रही है। ऐसा भी नहीं है कि वह प्रियतमके आतिथ्यकी

ओरसे उदासीन हो। इसका तो उसे बहुत पहलेसे ही ध्यान है। वह प्रतिदिन जंगलसे कन्द-मूल-फल बीन लाती है। उनमेंसे वह प्रत्येकको भलीभाँति देखती है।

जो उसे अच्छा प्रतीत होता है, उसे अपने प्यारे रामके लिये रख छोडती है और जो खराब होता है, उसे स्वयं खा डालती है।

अचानक एक दिन उसे समाचार मिलता है कि उसके आराध्यदेव आ रहे हैं! प्रियतम ज्ञानशिरोमणि ऋषियोंसे पूछते हैं—'महाराज! इधर कहीं शबरी भीलनीकी

झोंपड़ी है ?' आश्चर्यसे चिकत ऋषिगण उन्हें भीलनीकी कुटियाका मार्ग दिखाते आ रहे हैं! उनकी समझमें ही

नहीं आ रहा है कि आखिर इसका कारण क्या है? उनकी कुटियोंमें न पधारकर भगवान् उस भीलनीकी

कुटियाकी ओर क्यों जा रहे हैं ? पर—समझमें आनेलायक बात भी तो हो! वे बेचारे क्या जानें कि प्रेमके आगे ज्ञान

रह जाती है। सच्ची लगनके सम्मुख सारा पाण्डित्य

सींकेपर टँगा रह जाता है! जहाँ सर्वात्मसमर्पण होता है,

पानी भरता है। भक्तिके आगे विद्वत्ता हाथ बाँधे खड़ी

बिखर जानेको व्याकुल हो रहा है। इधर शबरीका और ही विचित्र हाल है। प्रियतमके आगमनके समाचारने उसकी अजीब ही अवस्था बना दी है। वे आ रहे हैं—भला, इससे भी बढ़कर किसी प्रेमीको

और कोई मंगल-संवाद हो सकता है? जिनकी प्रतीक्षा करते-करते उसकी आँखें पथरा गयीं, दिन-रात, मास-

वर्ष-सभी एक-एक कर व्यतीत होते गये-पर वे आजतक नहीं आये, वे ही-परम प्रेमास्पद आज आ रहे

बाँध लेता है। अहा, कितना अनोखा है यह प्रेम-

अपनी निस्सार साधनाको धिक्कारने लगते हैं। प्रभु-

प्रेमकी दीवानी शबरीकी आजतक उन्होंने न जाने कितनी

अधिक उपेक्षा और अवहेलना की है, अपार घृणा की

है, उसकी छायातकको अपने पास नहीं फटकने दिया

है और आज—आज वही शबरी उन सबसे बाजी मार

ले गयी है। भगवान् आज उसीकी कुटियामें अपनी

चरणरज बिखेरने जा रहे हैं। धन्य है, धन्य है—इस

अशिक्षित मूर्ख भीलनीका प्रेम-जिसके वशीभूत हो

आज वे परम दयालु श्रीभगवान् उसकी ओर बरबस

खिंचे चले जा रहे हैं! आज उनका सारा गर्व, सारा

अहंकार-चूर-चूर होकर भीलनी शबरीके चरणोंपर

शबरीकी ओर प्रभुका यह प्रेम देखकर ऋषिगण

बाजारका अलवेला सौदा!

िभाग ९०

हैं-यह आनन्द भला, कोई हृदयमें समानेलायक बात है ? इस प्रेमानन्दको रखनेके लिये उसे कोई ठौर ही ढूँढे नहीं मिलता! कितना सुहावना है आजका दिन—जब अनम्बर्णां अमानि हिती है, जियसमें के स्वर्भ अपिक्स ब्रुपुर्व विषयि । विषयि मही प्रमानि । अपे अपे अपे अपे अपे अ

संख्या ११] क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	निराला है! क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक
सफल होने जा रही है!	हाथकी मालामें सुमन गूँथने बैठ जाती है, कभी द्वारकी
आजहीके दिनके लिये तो वह इतनी लम्बी प्रतीक्षा	ओर ताकने लगती है। कभी झाड़ उठाकर द्वारके आस-
करती आ रही है। अहा, कितनी कठिन है यह अनवरत	पासका सारा मार्ग बुहार आती है—िक कहीं कोई
साधना! दिन-पर-दिन बीतते चले जाते हैं, मासों-पर-	कंकड़ी उसके प्रियतमके पावन पदारविन्दोंमें चुभ न
मास निकलते चले जाते हैं, सालोंपर सालें गुजरती चली	जाय। कभी चुपचाप बैठकर सोचने लगती है कि वे
जाती हैं—पर, यहाँ हताश होनेका काम नहीं। सतत	परम प्रेमास्पद जब आयेंगे तो मैं किस प्रकारसे उनका
जागरूक रहना पड़ता है। पल-पलपर प्यारेकी यादमें	स्वागत करूँगी। किस भाँति उनकी अभ्यर्थना करूँगी।
मशगूल रहना पड़ता है। हर घड़ी उनके मार्गपर आँखें	किन शब्दोंमें उनसे वार्तालाप करूँगी!—पर इन सब
बिछाये चुपचाप बैठा रहना पड़ता है। क्या पता, प्रियतम	व्यापारोंमेंसे किसीमें भी उसका मन नहीं लगता। चित्तकी
कब आ जायँ? वे तो सुबह और शाम, दोपहर और	बड़ी ही विचित्र अवस्था है। कुछ समझमें ही नहीं आता
आधी रात, वर्षा और तूफान, आँधी और पानी, गर्मी और	कि वह क्या करे ? नेत्रोंसे प्रेमाश्रुओंका प्रवाह अविरल
सर्दी—कुछ देखते नहीं, जब जी चाहता है तभी पहुँच	स्रोतकी भाँति बहता जा रहा है और वह उसीमें डूब-
जाते हैं। प्रेमी उनके स्वागतके लिये प्रस्तुत न रहे, वे	उतरा रही है। सारा होश-हवास गायब है। प्रियतम
आकर द्वारसे वापस लौट जायँ तो इससे बढ़कर प्रेमीके	कितनी देरसे उसकी कुटियामें खड़े उसकी ओर देखते
लिये और दु:खकी बात हो ही क्या सकती है?	हुए मुसकराते खड़े हैं और वह उनकी ओर हक्की-
शायद तुम कहो कि यह प्रतीक्षा तो बड़ी बुरी चीज	बक्की-सी देखती हुई चुपचाप खड़ी है। अहा, यही तो
है तो भैया, साधना और सो भी प्रेम-साधना—कोई	है वह अनुपम मंजुल मूर्ति, जिसका वर्णन उसके
सरल बात नहीं है! सभीका मन उसमें नहीं लग सकता।	गुरुदेवने उससे किया था! इसी मूर्तिको तो वह इतने
तभी तो सभी लोग प्रभुके प्यारे नहीं बन पाते? सच्चे	अधिक दिनोंसे हृदयमें धारण किये हुए थी। इसीके
प्रेमियोंको छोड़कर और सबको तो इस मार्गमें नीरसताका	दर्शनोंकी प्रतीक्षामें तो वह अभीतक अपने प्राणोंको
ही बोध होता है। सभी वेदान्तको, योग और उपासनाको	शरीरके घेरेमें बन्द किये हुए थी! बंगभाषाके एक कविने
शुष्क विषय कहा करते हैं, किसलिये? इसी अनवरत	ठीक ही तो कहा है कि—
साधनाहीके कारण तो! यह प्रतीक्षा, यह इन्तजारी ही	साधनाये सिद्धि लाभ एके दिने नाँहि हय,
तो लोगोंको खलती है और इसीसे अनेक इस मार्गपर	श्रमेर साफल्य आछे ए जगते सुनिश्चय,
आकर इसे छोड़ बैठते हैं, पर भैया, प्रेमीको इस प्रतीक्षामें	सुदिन होलो आगत पूर्ण हके मनोरथ,
ही आनन्द मिलता है, तभी तो वह हँस-हँसकर कहा	सद्यः जात तरु शाखा फुटे न कुसुम भार,
करता है कि—	समये दिवेन विभु श्रम योग्य पुरस्कार,
'वस्लमें हिज्रका गम, हिज्रमें मिलनेकी खुशी,	परिश्रमका पुरस्कार तो मिलेगा ही, भले ही आज
कौन कहता है जुदाईसे विसाल अच्छा है।'	न मिले, दस दिन बाद मिले! साधनामें यदि साधकको
वे तो इसे प्रेम-मिलनसे भी उत्तम वस्तु समझते हैं।	शीघ्र ही सफलता नहीं मिलती तो हताश न होना
भला, कुछ ठिकाना है ऐसे मस्तोंकी अलबेली मस्तीका!	चाहिये। उसे छोड़ बैठनेकी आवश्यकता नहीं है। यहाँ
हाँ, तो शबरीके हर्षका आज पार नहीं है। वह	तो सतत प्रयत्नमें लगे रहना पड़ता है। 'राम' के शब्दोंमें
कभी कुटियाके बाहर जाती है, कभी भीतर! कभी	यहाँ तो—

भाग ९० अज्ञात लोककी वस्तुएँ हैं। वह इनमेंसे कुछ भी नहीं हर रात नयी इक शादी है, हर रोज मुबारक बादी है। जानती। पर वे श्यामसुन्दर तो यह कुछ देखते नहीं। तभी रिमझिम रिमझिम आँसू बरसें—क्या अब्र बहारें देता है।। तो ऐसे निर्मल हृदयवालोंसे उनकी पटरी बैठ जाती है। क्या खूब मजेकी बारिशमें, वह लुत्फ वस्लका लेता है। उनका तो यह वचन है कि-किश्ती मौजोंमें डूबे हैं, बदमस्त उसे कब खेता है॥ यह गर्क़ाबी है जी उठना, मत झिझको उफ़! बरबादी है। निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।। इसीसे तो वे भक्तोंपर इतनी जल्दी रीझ जाते हैं, क्या रंगत है क्या राहत है, क्या शादी है आजादी है॥हर०॥ भैया, यह तो भक्तिका मार्ग है, प्रेमका सौदा है। तभी तो तुलसी बाबाने कहा है कि-इसे 'सिरकी बाजी' कहा जाता है। फिर इसमें हताश का भाषा का संसकृत प्रेम चाहिऐ साँच। होनेकी बात ही क्या है? निरन्तर अपने कर्तव्य-पथपर काम जु आवै कामरी का लै करिअ कुमाच॥ आरूढ़ रहो, कर्ममें संलग्न बने रहो, साधनाकी अग्नि भैया, वे केवल संस्कृत, फारसी और अँगरेजी ही प्रज्वलित बनाये रखो। एक-न-एक दिन अवश्य ही नहीं जानते, वे संसारकी सारी भाषाओंके ज्ञाता हैं। तुम्हारी साधना सफल होगी और शबरीकी भाँति तुम्हारी वेदकी ऋचाओं, कुरानकी आयतों, बाइबिलके समुल्लासोंके कुटियापर भी वे श्रीहरि पद-रज बिखेरने आ जायँगे! पाठहीसे वे केवल प्रसन्न होते हों—ऐसा नहीं है। अरे, 'पगली! कुछ खिलाये पिलायेगी या यों ही, खड़ी-खड़ी वे तो अपने प्रेमीकी टूटी-फूटी, व्याकरणसे सर्वथा मेरा मुख ताका करेगी?' प्रियतमके इन मधुर वाक्योंसे अशुद्ध भाषासे भी प्रसन्न हो जाते हैं। सच्चे प्रेमका एक शबरीकी समाधि भग्न हुई। लज्जासे व्याकुल होकर वह आँसू ही उन्हें रिझा देनेके लिये, भक्ति-परवश कर देनेके अपने आराध्यदेवके चरणोंमें लिपट गयी और अपने लिये बहुत है—पर कोई हो भी तो वैसा आँसू नयनोंके पावन जलसे प्रियतमके चरण पखारनेमें संलग्न दुलकानेवाला! भैया, प्रेमकी मूक वेदनाकी भाषा तो हो गयी! आँसुओंकी रेल-पेल मच गयी। इनकी मधुर उन्हें सबसे अधिक प्रिय है। प्रेमियोंकी टूटी-फूटी प्रार्थनामें उन्हें यजुर्वेदपाठी पण्डितके पाठसे कम आनन्द वर्षामें यह प्रेमी और प्रेमास्पदका, भक्त और भगवान्का, जीव और ईश्वरका, शबरी और रामका—मधुर सम्मिलन नहीं आता। रुदनकी मूक भाषाको समझना, उसमें अवगाहन करना, उसकी गहराईका पता लगाना—वे हुआ। साधनाके मधुर फलको पाकर शबरी प्रेमानन्दमें विभोर हो गयी। भली प्रकार जानते हैं। मन्त्रों और ऋचाओं, श्लोकों और वह एकटकसे प्रियतमकी झाँकी करनेमें संलग्न है। स्तोत्रोंकी जितनी स्वच्छन्दतासे उनके घेरेमें पहुँचनेकी आँसुओंकी मौन भाषामें ही वह अपने प्रियतमकी शक्ति है, उतनी ही शक्ति प्रेमसे गद्गद एक टूटी-फूटी अभ्यर्थना कर रही है। उसके पास और तो शब्द ही नहीं पुकारमें भी है-इस बातको तुम भली प्रकार समझ हैं। किन शब्दोंमें वह अपने प्यारे प्रियतमकी आराधना रखो। भैया, वे तो वास्तवमें भाव देखा करते हैं। भावोंके करे। अन्तमें— वे सच्चे पुजारी हैं। जहाँ भी सच्चे भावसे उन्हें पुकारा अधम ते अधम अधम अति नारी । तिन्ह महँ मैं मितमंद अघारी।। गया, उनका स्मरण किया गया, वहींपर वे आ उपस्थित में भला क्या जानूँ कि किन शब्दोंसे तुम्हारी पूजा हुए-इसमें जरा-सा भी सन्देह करनेकी गुंजायश नहीं। और सन्देह करके कोई उनके मार्गका पथिक भी तो नहीं की जाती है-कहकर वह पुन: गद्गद होकर अपने लाड़ले प्रेमीके चरणोंमें गिर पड़ी। पूजा और अर्चा, बन सकता। तर्क और प्रमाण, शंका और सन्देहको भजन और प्रार्थना, मन्त्र और श्लोक—उसके लिये लेकर उन्हें नहीं पाया जा सकता। उनके मार्गपर तो

प्रेमका पन्थ निराला है! संख्या ११] श्रद्धा, विश्वास और धैर्य लेकर ही अग्रसर हुआ जा चक्खे हुए बेरोंको बेर बेर खुश होकर भोग लगाते हैं।। सकता है। सच्चे भावसे उन्हें पुकारना पड़ता है, तभी और केवल तभी ही सफलताका सुनहला मुख दीख पड़ता है, अन्यथा नहीं। वास्तवमें— राम राम सब कोई कहै, ठग ठाकुर औ चोर।

बिना भाव रीझै नहीं, नटवर नन्दिकशोर॥

हृदयमें प्रेमका दरिया तो उमड़ रहा था। उसके हृदयमें आराध्यदेवके लिये सर्वोत्तम आसन तो बिछा हुआ था। प्रेम-मदिराका अलबेला प्याला तो उसने जी भरकर गलेके नीचे उतार लिया था। उसमें वह रात-दिन मस्त तो बनी घूमा करती थी-फिर वे प्रेमके हाथोंकी कठपुतली, मनमोहन प्रेमस्वरूप उसकी ओर आकृष्ट न होते यह कैसे सम्भव था? प्रेमीकी ऐसी अनवरत साधना

देखकर वे कबतक उससे दूर रह सकते थे? शबरीके

आँसू पोंछकर उन्होंने कहा—'पगली! तू रोती क्यों है?

तू क्या यह नहीं जानती कि मैं तो—'मानउँ एक भगति कर नाता!' मैं तो और कुछ मानता नहीं; पापी-से-

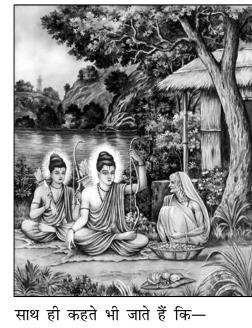
पापी, दीन-से-दीन व्यक्तिको भी-यदि वह सच्चे

हृदयसे मुझसे प्रेम करता है तो मैं उसे हृदयसे चिपटा

डलिया उठा लायी। और फिर क्या था-

किया है?'

शबरी ज्ञानशून्या थी-पर इससे क्या? उसके



क्यों न हो, प्रेम-सुधाकी अनुपम मिठास जो इनमें भरी हुई है! लक्ष्मणको भी देते हुए वे कहने लगते हैं-हे लक्ष्मण! तुमने खाये नहीं, देखो तो कैसे मीठे हैं।

पातालसे लेकर स्वर्ग तलक जो हैं सो इससे फीके हैं।। और लो— तुमने भी बहुत खिलाये हैं, पर—उनमें यह आनन्द नहीं।

भला इस प्रेमवत्सलताका भी कुछ ठिकाना है?

ला बेर बेर क्यों बेर करे, अमृतसे बढ़कर बेर हैं ये।

पक्के मीठे औ ताकतवर, अति सुन्दर मीठे बेर हैं ये॥

लेनेको सदैव व्याकुल रहा करता हूँ। अपने प्रेमियोंको मैं तो प्राणोंसे भी अधिक प्रेम करता हूँ — फिर तू तो ठहरी मेरी सच्ची प्रेमिन। तुझमें तो वे सारे लक्षण मौजूद हैं, जो एक प्रेमी भक्तमें होने चाहिये। तुझे यों व्याकुल सीताका भी परसा भोजन है इतना मुझे पसन्द नहीं॥

होनेकी आवश्यकता नहीं। उठ, बहुत रो लिया। अब मेरे आज मर्यादापुरुषोत्तम प्रेमके आगे जाति, कुल, वर्ण, जूठा-सखरा—सब कुछ भुला बैठे हैं। उनका यह व्यवहार हमें पुकार-पुकारकर समझा रहा है कि 'भैया, प्रभु तो प्रेमके वशमें हैं।' तब भी यदि हम उनके पावन

लिये कुछ खानेको तो ले आ। देख, मैं कबसे तुझसे खानेके लिये लिये कुछ माँग रहा हूँ। तू तो रोनेके मारे मेरी भूखकी ओर ध्यान ही नहीं दे रही है। ला, ला, देर न कर। देखूँ, तूने मेरे लिये खिलानेका क्या प्रबन्ध

हर्षविह्नला पगली उठी और बड़े प्रेमसे अपनी

प्रेमिनका ऐसा प्रेम देख रघुनाथजी हाथ बढ़ाते हैं।

पथका पथिक न बनाओंगे क्या?

पदारिवन्दोंके चंचरीक न बनें, उनकी प्रेम-मिदराके

दीवाने न बनें तो हम-सा अभागा और कौन होगा? हे परम पावन प्रियतम! हमें अपने इस निराले पुण्यप्रदर्शनका फल : बालि-प्रसंग

(पं० श्रीरामिकंकरजी उपाध्याय)

समाजमें अनेक लोग ऐसे होते हैं, जो दान, पुण्य लिये ललकारा। उसने सोचा कि बालि सोया होगा तथा

युद्धहेतु बाहर नहीं आयेगा और प्रात: वह घोषित कर आदि तो बहुत करते हैं; किंतु अपने यश एवं प्रशंसाहेतु

पुण्यका प्रदर्शन उससे भी कहीं अधिक करते हैं। कुछ

लोग लोक-परलोक, स्वर्ग-नरक या ईश्वरको किसने

देखा है—ऐसे सर्वथा नास्तिकतापूर्ण विचार अपनेमें

रखकर केवल मान-प्रतिष्ठा, भोग-ऐश्वर्यकी प्राप्तिके

लिये पाखण्डपूर्वक दान-पुण्य, गरीबोंकी सेवा, साधु-

ब्राह्मण-सेवा आदि करते हैं। यह भी एकमात्र अपराध कमाना है। यदि ये दान-पुण्यके कार्य नि:स्वार्थ, केवल

सेवाभावसे किये होते तो इनका फल उनकी कल्पनासे

भी कहीं अधिक मिलता, किंतु दुर्भाग्यवश उन्हें असली हीरे-मोतीके स्थानपर केवल काँचके टुकड़े-वृत्ति ही प्राप्त होती है (अर्थात् केवल प्रशंसा)।

इस प्रकारकी वृत्तिके मूलमें उनका अभिमान ही बढता है। अभिमानी व्यक्ति बडा प्रदर्शन-प्रिय होता है।

ऐसा व्यक्ति अच्छा कार्य भी करता है तो उसके पीछे उसका उद्देश्य केवल प्रदर्शन करना ही होता है। मानसमें तुलसीदासजीने एक ऐसे ही पात्रका वर्णन किया है। वह

है बालि। बालि पुण्यकी इसी प्रदर्शनवृत्तिसे ग्रस्त है। इस दैत्यको मारा है, उसे वरदान नहीं शाप मिलेगा! यह वर्णन आता है कि सुग्रीव बालिके डरसे ऋष्यमूक

पर्वतपर हनुमान्जीके साथ रहते हैं। बालि शापके कारण इस पर्वतपर नहीं आ सकता। बालि यद्यपि अत्यन्त

बलशाली है, पर उसकी वृत्ति ऐसी है कि उसकी यह

विशेषता उसके लिये अभिशाप बन जाती है। बालिको मुनियोंने जो शाप दिया है, उसके पीछे जो कारण है वह

बड़ा सांकेतिक है। कथा आती है कि एक दुन्दुभि नामका राक्षस था।

उसने बहुत आतंक मचाया हुआ था। पापकर्मोंमें लीन रहता था। साधु-सन्तोंके आश्रमोंको, उनके यज्ञोंको

देगा कि उसने बालिपर विजय प्राप्त कर ली है, किंत् उसका गणित उलटा हो गया। बालिने उससे युद्ध किया। बालिने जब उसपर वार किया तो वह मर ही

गया। बालिने सोचा कि इस राक्षसको मारनेका यश तो मुझे मिलना ही चाहिये, पर वह तो मर ही गया, तब यश मिले कैसे ? उसने राक्षसके शवको उठाकर ऋष्यमुक

पर्वतपर फेंक दिया जिसपर ऋषि-मुनि साधना-तपस्या किया करते थे। शवके रक्त-मज्जा एवं हड्डियोंके अंश उन आश्रमोंमें बिखर गये, जिससे वे सब आश्रम अपवित्र

हो गये। उसका उद्देश्य था कि लोग जानें तो सही कि उसका वध बालिने किया है। यह दम्भ और दिखानेकी वृत्ति बालिके जीवनसे कभी गयी नहीं। मनोभाव यह है

कि मैंने मार तो दिया, पर यदि किसीने देखा नहीं तो मारनेका क्या लाभ! लोग देखें तो सही कि हमने क्या किया है। यही दिखावेकी वृत्ति है, जो बालिको कभी छोड़ती नहीं। ऋषिगण बिगड़कर कह उठे-जिस मूर्खने

बालिके जीवनकी कैसी विडम्बना है! कहाँ तो उसे राक्षसको मारनेके कारण वरदान मिलना था और कहाँ दम्भमें फँसकर वह शापका भागी बनता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब हमारा पुण्य प्रदर्शनके लिये होता

है एवं केवल लोकसम्मान पानेकी दृष्टिसे हम पापको

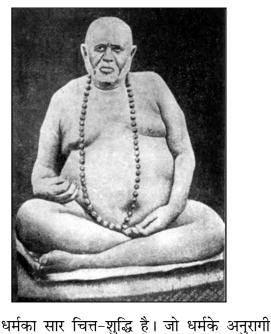
पराजित करते हैं, तो फल यह होता है कि हमारे जीवनके सद्गुण भक्तिकी प्राप्तिमें सहायक नहीं बनते। बालि यदि अभिमानप्रेरित प्रदर्शनके स्थानपर सचमुच मुनियोंकी सेवाकी दृष्टिसे दुद्म्भिका वध करता, तो

शापके स्थानपर मुनियोंसे आशीर्वाद प्राप्त करता और अपने पराक्रमको सार्थककर धन्य हो जाता। अपवित्र कर देता था। एक दिन वह आधी रातको ्रामान्त्रिपांडm-Discord Server https://dsc-gg/dharma बालिमे इतना अतुलनीय पराक्रम Ayinash/Shi

संख्या ११] _{फफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफफ}	
विश्वविजेता रावणको भी परास्त कर दिया, पर बालिने	यह आपकी कृपाका ही परिणाम है और आप इसे
अपने इस पराक्रमके प्रदर्शनके लिये रावणको मारनेके	स्वीकार कीजिये। यदि इस प्रकारसे जो भोग लगानेके
स्थानपर अपनी बगलमें दबा लिया और सबको दिखाता-	बाद प्रशंसाका प्रसाद लेगा, उसके जीवनमें पतनकी आशंका
फिरता रहा कि मैं रावण-विजेता हूँ। बालिकी इस	नहीं होगी तथा अहंकारके रोगसे वह सुरक्षित रहेगा।
वृत्तिके मूलरूपमें उसका पुण्य-प्रदर्शनका अभिमान ही	हमारा अहंकार भगवान्की शरणागति करनेमें
कारण है।	बाधक है। मनुष्यकी गहरीसे गहरी और पहली बीमारी
यदि बालि रावणको पराजितकर प्रमाण-पत्रके रूपमें	अहंकार है। जहाँ अहंकार है, वहाँ दया झूठी है, जहाँ
काँखमें दबाकर घूमनेके स्थानपर उसका वध कर देता तो	अहंकार है, वहाँ अहिंसा झूठी है, जहाँ अहंकार है, वहाँ
रावणके अत्याचारसे समाजको मुक्त कर देता। सचमुच,	शान्ति झूठी है और जहाँ अहंकार है, वहाँ कल्याण तथा
यह एक महान् कार्य होता, पर बालिका अहं उसे वैसा	मंगल, लोकहितकी बातें झूठी हैं, वहाँ यह सारी-की-
नहीं करने देता। यही पुण्य-प्रदर्शनका अभिमान उसे	सारी बातें केवल अहंकारके आभूषण हैं, सिवा इसके
विनाशकी दिशामें ले जाता है। आगे चलकर भगवान् रामसे	और कुछ भी नहीं है।
उसका जो संवाद होता है, उसमें यही बात आती है।	उपाय —जबतक हमारे अहंकारका नाश नहीं
भगवान् रामका बाण लगनेसे बालि जब भूमिपर	होगा, भगवान् हमें अपनी शरणमें नहीं लेंगे। अब प्रश्न
गिर पड़ा, तो प्रभु उसके पास आ गये। भगवान्को सामने	यह है कि हमारा अहंकार कैसे छूटे? संत लोग ऐसा
पाकर बालिने उनसे पूछ दिया—'आपने मेरा वध क्यों	बताते हैं कि हम अपने साधनोंके द्वारा अहंकारको नहीं
किया?' भगवान् रामने बालिके अभिमानको ही इसका	छोड़ सकते। यह साधनसे साध्य नहीं है बल्कि
कारण बताते हुए यही कहा कि—	भगवान्की कृपासे साध्य है। हमें भगवान्की कृपा प्राप्त
मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारि सिखावन करसि न काना॥	करनी होगी। हमें भगवान्की कृपा पानेके लिये उनका
(रा०च०मा० ४।९।९)	कृपापात्र बनना होगा। कृपापात्र बननेके लिये हमें प्रभुका
तुम्हारी पत्नीने तुम्हें कितना सुन्दर उपदेश दिया	नित्य निरन्तर सुमिरण करना होगा। स्वामी रामसुखदासजीने
था, पर अभिमानके कारण तुमने उसपर ध्यान नहीं	सरल उपाय बताया है कि थोड़ी-थोड़ी देरमें हम
दिया। इसलिये तुममें पाप और अभिमान दोनों हैं और	भगवान्से प्रार्थना करें कि 'हे प्रभु! मैं आपको भूलूँ
मेरे अवतार लेनेका उद्देश्य इन दोनोंको नष्ट करना है।	नहीं।' बार-बार नीचे लिखे भजनको गायें।
इसलिये मैंने तुम्हारे ऊपर प्रहार किया है।	शरण में आये हैं हम तुम्हारी, दया करो हे दयालु भगवन्।
मानसके उत्तरकाण्डमें गोस्वामीजीने इस पुण्य-	मिटा दो मेरे अहंकार को, दया करो हे दयालु भगवन्॥
प्रदर्शनके अभिमानका मानसिक रोगोंकी श्रेणीमें वर्णन	न हम में बल है न हम में शक्ति, न हम में साधन न हम में भक्ति।
किया है। यह एक असाध्य रोग है, जिसका उपचार	तेरे दर के हैं हम भिखारी, दया करो हे दयालु भगवन्।
बड़ा जटिल है। अहंकारसे बचनेका एक सरल उपाय	मिटा दो मेरे अहंकार को, दया करो हे दयालु भगवन्॥
यह है कि जब हमारे जीवनमें सफलता एवं विजयके	इस प्रकार जब हम भगवान्से बार-बार प्रार्थना
क्षण आयें तो उस सफलता तथा विजयको हम	करेंगे तो भगवान् अवश्य ही कृपा करके हमारे
भगवान्की कृपाका प्रसाद ही मानें तथा भगवान्से प्रार्थना	अहंकारका विनाश करेंगे।
करें कि प्रभु! यह सफलता तथा विजय जो मिली है,	[प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]
	>+

चित्त-शुद्धि (तत्त्वदर्शी महात्मा श्रीतैलंग स्वामीजी महाराज)

कि भोजनका त्याग कर दिया जाय; केवल वायु-भक्षण



इच्छुक हैं, उन्हें इस तत्त्वके प्रति विशेष ध्यान रखना चाहिये। जिसकी चित्त-शुद्धि नहीं, उसका कोई धर्म

अथवा सनातन-धर्मके यथार्थ मर्मका अन्वेषण करनेके

नहीं। चित्त-शुद्धि केवल सनातन-धर्मका ही सार है, सो बात नहीं है। यह सभी धर्मीका तत्त्व है। जिसका चित्त शुद्ध है, वही श्रेष्ठ हिन्दू, श्रेष्ठ मुसलमान, श्रेष्ठ ईसाई

आदि है। जिसकी चित्त-शुद्धि नहीं, वह किसी भी धर्मके अनुयायियोंमें धार्मिक कहा जाकर गण्य नहीं हो

सकता। चित्त-शुद्धि ही धर्मका मर्म है। यह अखण्ड दार्शनिक सिद्धान्त है।

चित्त-शुद्धि क्या है—चित्त-शुद्धिका पहला लक्षण इन्द्रियोंका संयम है। इन्द्रिय-संयम—इस वाक्यद्वारा यह नहीं समझना चाहिये कि सब इन्द्रियोंका एक बार ही

उच्छेद अथवा ध्वंस करना होगा। इन्द्रियोंको संयत करनेका अभिप्राय इन्द्रियोंको अपने वशमें करना है,

करनेका अभिप्राय इन्द्रियोंको अपने वशमें करना है, स्वयं उनके वशमें होना नहीं। इसीका नाम इन्द्रिय-संयम है। भोजन-लोलुपता एक प्रकारसे इन्द्रिय-प्रवृत्ति है,

किंतु इन्द्रियोंको संयत करनेमें यह नहीं समझना चाहिये

किया जाय अथवा गला-सड़ा दूषित आहार करके दिन व्यतीत कर दिया जाय।

शरीर एवं स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये जिस परिमाणमें और जिस प्रकारके आहारकी आवश्यकता है, वही

करना चाहिये। इससे इन्द्रिय-संयममें कोई बाधा नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त उत्तम आहारादि अविधेय नहीं है; यदि उसमें स्पृहा—इच्छा न रहे। मोटी बात यह है

जो बहुत कुछ आहारादिपर निर्भर है। आत्मरक्षार्थ अथवा धर्मरक्षार्थ अर्थात् ईश्वरीय नियम-रक्षार्थ जितनी इन्द्रियोंकी चरितार्थता आवश्यक

है, उसके अतिरिक्त जो इन्द्रिय-परितृप्तिकी अभिलाषा करता है, इन्द्रिय-संयम उसके वशकी बात नहीं। जो इन्द्रिय-परितृप्तिमें सुखानुभव नहीं करता, आकांक्षा नहीं

है, यह समझना चाहिये। ऐसे अनेक मनुष्य हैं, जो इन्द्रिय-परितृप्तिसे

विमुख रहनेपर भी अपने मनको शुद्ध नहीं कर पाते। वे लोकलज्जासे अथवा लोगोंमें प्रसिद्धिके लिये किंवा ऐहिक उन्नतिके लिये अथवा धर्मके भानसे पीड़ित होकर जितेन्द्रियकी तरह कार्य करते हैं, किंतु उनके भीतर इन्द्रियोंकी ज्वाला धधकती रहती है, जन्मसे

मृत्युपर्यन्त वे स्खलितपर्द न होकर भी (अपानवायुको

रखता, केवल धर्मरक्षाकी भावना रखता है, वह संयतेन्द्रिय

कि इन्द्रियोंकी आसक्तिका अभाव ही इन्द्रिय-संयम है,

रोक रखनेपर भी) इन्द्रिय-संयमसे बहुत कुछ दूर ही रहते हैं। जो बार-बार इन्द्रिय-तृप्तिके लिये उद्योगी एवं कृतकार्य हैं, उनसे ऐसे धर्मात्माओंका भेद बहुत ही थोड़ा है। दोनोंको ही समानरूपसे नरककी अग्निमें दग्ध होना पड़ता है। इन्द्रिय-परितृप्ति करो अथवा न करो,

जब भ्रमसे भी इन्द्रिय-परितृप्तिकी बात मनमें न आये,

आत्मरक्षार्थ अथवा धर्मरक्षार्थ इन्द्रियोंको चरितार्थ करना

संख्या ११] चित्त	-शुद्धि २५			
**************************************	**************************************			
पड़े तो भी उसको दु:खके अतिरिक्त सुखका विषय न	हो, मेरा यश बढ़े, मैं बड़ा बनूँ, मेरा सौभाग्य हो, मुझे			
माना जाय। उसी स्थितिमें यह समझा जायगा कि	सब धार्मिक और महात्मा मानकर आदर करें—वे सर्वदा			
इन्द्रिय-संयम हुआ है। इसके अभावमें योगाभ्यास,	ही यह कामना करते हैं। जिससे यह वासना पूरी हो,			
तपस्या, उपासना आदि कठोर कार्य सभी वृथा हैं।	चिरकाल इसी चेष्टामें—इसी उद्योगमें व्यस्त रहते हैं।			
केवल योग अथवा तपस्या करनेसे इन्द्रिय-संयमरूप	इसके लिये वे न करें ऐसा कार्य नहीं, और इससे भिन्न			
कार्य पूरा नहीं होता। कार्यक्षेत्रमें—संसार-धर्ममें ही इन्द्रिय-	ऐसा विषय नहीं जिसमें मन न लगाते हों। जो			
संयम हो सकता है। प्रतिदिन उनका निवास स्वीकार	इन्द्रियासक्त लोग हैं, उनकी अपेक्षा भी ये निकृष्ट हैं।			
करनेवाला इन्द्रिय-परितृप्तिके उपादानोंसे दूर जाकर—	इनके लिये धर्म कुछ नहीं, कर्म कुछ नहीं, ज्ञान कुछ			
सब विषयोंसे निर्लिप्त हो अपने मनमें यह भले ही समझ	नहीं और भक्ति कुछ नहीं। ईश्वरको माननेपर भी ईश्वर			
ले कि मैं इन्द्रियोंको जीतनेवाला हो गया हूँ, किंतु जैसे	है या नहीं, इसका उन्हें आत्मविश्वास नहीं। इन्द्रिय-			
मिट्टीका पात्र अग्निमें पका नहीं तो वह छूते ही टूट जाता	आसक्तिकी अपेक्षा यह स्वार्थपरता चित्त-शुद्धिमें बड़ी			
है, वैसे ही इस प्रकारका इन्द्रिय-संयम भी लोभके	बाधक होती है। परार्थपरताके ग्रहण और वासनाके			
स्पर्शमात्रसे ही ठहर नहीं सकता। इसके प्रमाण बहुत हैं।	त्यागके बिना चित्त-शुद्धि नहीं होती। जब अपने लिये			
स्वर्गसे एक अप्सरा आयी और उसी क्षण ऋषिराजका	सुखान्वेषण करोगे, उसी प्रकार दूसरेके लिये भी सुख			
योग भंग हो गया, अधिक धैर्य धारण करनेमें असमर्थ	ढूँढ़ोगे,* जब अपने-आपसे दूसरेको भिन्न न समझोगे,			
होकर अन्तमें वे इन्द्रिय-परितृप्ति करके ही शान्त हुए।	जब अपनोंकी अपेक्षा दूसरोंको अपना मानोगे, जब			
जिस देशमें जो वस्तु नहीं मिलती, उस देशके लोग	क्रमशः अपने–आपको भूलकर दूसरेको सर्वस्व समझोगे,			
तो उस वस्तुको खाते नहीं अथवा उसे व्यवहारमें नहीं	जब दूसरेमें अपने आत्माको निमज्जित रख सकोगे, जब			
लाते, परंतु यदि वही वस्तु कभी मिल जाय और उसे	तुम अपने आत्माको विश्वव्यापी विश्वमय अनुभव			
बड़े आग्रहके साथ खायें एवं व्यवहारमें लायें तो इसको	करोगे, तभी यह समझना चाहिये कि चित्त-शुद्धि हुई			
उस वस्तुका त्याग नहीं कहा जा सकता। जो प्रतिदिन	है। यह बिना हुए कौपीन धारणकर संसार-परित्यागपूर्वक			
इन्द्रिय-चिरतार्थ करनेके उपयोगी उपादानोंके संसर्गमें	भिक्षा-वृत्तिके अवलम्बनद्वारा घर-घरमें अलख-जगनिया			
आये हैं। उनसे युद्धकर कभी जयी और कभी विजित	'अहं ब्रह्मास्मि' कहने या हरिनामकी ध्वनि करते हुए			
हुए हैं। वे ही शेषमें इन्द्रिय-जय करनेमें सफल हुए हैं।	घूमनेसे चित्तकी शुद्धि नहीं होगी।			
पराशर अथवा विश्वामित्र ऋषि इन्द्रिय-जय नहीं कर	पक्षान्तरमें राज–सिंहासनपर बहुमूल्य रत्न धारणकर			
सके। इन्द्रिय-जय करनेमें समर्थ हुए थे—चिरस्मरणीय	बैठनेवाला जो राजा एक भिक्षुक प्रजाजनके दु:खको			
भीष्म और श्रीराम-भ्राता लक्ष्मण।	अपने दु:खकी तरह समझेगा, नि:सन्देह उसकी चित्त–			
इन्द्रिय–संयम अपेक्षाकृत तुच्छ बात है। उसकी	शुद्धि हुई है। जो सब शुद्धियोंका स्रष्टा है, जो शुद्धिमय			
अपेक्षा चित्त-शुद्धिका बड़ा महत्त्व है। बहुतोंकी इन्द्रियाँ	है, जिसकी कृपापर शुद्धि अवलम्बित है, उसमें प्रगाढ़			
संयत हैं, किंतु दूसरे कारणसे उनका चित्त शुद्ध नहीं	भक्ति होना चित्त-शुद्धिका प्रधान लक्षण है।			
हुआ है। 'इन्द्रिय-सुख-भोग नहीं करूँगा। किंतु मैं	भक्ति ही चित्त-शुद्धिका और धर्मका मूल है।			
अच्छा रहूँ, मुझे सब प्यार करें'—इस प्रकारकी वासना	चित्त-शुद्धिका पहला लक्षण हृदयमें शान्ति, दूसरा			
उनके मनमें बड़ी प्रबल है। मेरे पास धन हो, मेरा मान	लक्षण दूसरेको प्यार करना और तीसरा लक्षण ईश्वरमें			

रहे। जो व्यक्ति अपनेमें और दूसरेमें थोड़ा भी भेद देखता भक्ति है। जिन व्यक्तियोंके लिये इस प्रकार शान्ति, प्रीति और भक्तिका योग होता है, उनके हृदयमें कोई कामना है, जिसे दूसरेका दु:ख अपने दु:खके समान अनुभव न नहीं रहती। यहाँतक कि उन्हें सालोक्य, सामीप्य हो, उसे ईश्वर और ब्रह्ममय जगत् किस प्रकार है, इसका ज्ञान नहीं हो सकता। ईश्वर सर्वव्यापी है। वह सब सायुज्य, सारूप्य आदि मुक्तियाँ देनेकी इच्छा प्रकट की जाय तो भी वे भगवत्सेवाको छोडकर और कुछ नहीं स्थानोंमें - वन, ग्राम, नगर, जल, स्थल, शून्य, पत्थर एवं चाहेंगे। धनकी आशा छोड, श्रद्धायुक्त एवं निष्काम हो सकल प्राणियोंमें -- आत्माके रूपमें अवस्थान करता है।

हिंसा-त्यागपूर्वक पूजा-जपद्वारा उसके स्वरूपका दर्शन, केवल मुँहसे यह कह देनेसे कि ईश्वर सर्वव्यापी है, कोई फल नहीं हो सकता। ईश्वर सर्वव्यापी है, यह स्वीकार स्पर्श, स्तवन, वन्दन, सब प्राणियोंमें उसीका भाव-चिन्तन करना, धैर्य-वैराग्य धारण करना, महान् व्यक्तियोंका

कर लेनेपर ही यह मानना होगा कि जगत् ब्रह्ममय है। सम्मान करना, दीनोंके प्रति दया एवं आत्म-तुल्य व्यक्तियोंके साथ मैत्री, अन्तरिन्द्रयोंका दमन, बाह्येन्द्रियोंका निग्रह, आत्म-विषयक-श्रवण, भगवन्नाम-संकीर्तन,

सरलता, सत्संग, निरहंकारिता-प्रदर्शन आदि गुणोंद्वारा चित्त-शुद्धि होती है और ऐसे सदाचारी लोग बिना प्रयत्नके उसे प्राप्तकर जिस प्रकार गन्ध वायुयोगद्वारा

अपने स्थानसे आकर घ्राणका आश्रय लेती है, उसी प्रकार भक्ति-योगसे युक्त चित्त बिना यत्नके परमात्माको

आत्मसात् कर लेता है।^१ वह सब भूतोंका आत्मस्वरूप होकर सब प्राणियोंमें अवस्थित है।^२ मनुष्य जबतक सब प्राणियोंमें अवस्थित अन्तर्दृष्टिद्वारा देखना नहीं चाहते, इसीलिये उसे देख उस परमात्माको अपने हृदयमें न पहचान सके, तबतक नहीं सकते। चित्त-शुद्धि उसको प्राप्त करनेका प्रधान

अपने कर्ममें रत रहकर वह उपासना अथवा जप करता

श्रीपतिको रख और इसका विचारकर कि दोनोंके बीचमें विश्राम और हित किसमें हैं ? फिर युक्ति और अनुभवसे

जहाँ परमानन्द मिले, उसीका सेवन कर। १. (क) न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा मय्यर्पितात्मेच्छति मद्विनान्यत्॥ (श्रीमद्भा० ११।१४) (ख) न मोक्षस्याकाङ्क्षा भवविभववाञ्छापि च न मे। —श्रीशंकराचार्यः

जो ज्ञानके द्वारा यह कहते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापी है, ईश्वर सर्वान्तर्यामी है, वे अच्छी तरह समझ सकते हैं कि ब्रह्ममय जगत् किस प्रकार है। ईश्वर क्या पदार्थ है, उसका आकार-प्रकार कैसा है और क्या करनेसे अथवा

िभाग ९०

किस मार्गका अवलम्बन करनेसे उसको प्राप्त किया जाय—आरम्भमें यह बात न धारणामें आ सकती है और न दृष्टिपथमें। यह केवल समझ लेना होगा। समझने या जान लेनेका प्रयत्न करनेसे ही हृदयंगम होकर पहले कारण प्रत्यक्ष होगा और बादमें दर्शन। वह दिन-रात अपने बहुत समीप, बिलकुल सामने ही है। हम

साधन है। चेतश्चञ्चलतां विहाय पुरतः संधाय कोटिद्वयं तत्रैकत्र निधेहि सर्वविषयानन्यत्र च श्रीपितम्। विश्रान्तिर्हितमप्यहो क्व नु तयोर्मध्ये तदालोच्यतां युक्त्या वानुभवेन यत्र परमानन्दश्च तत्सेव्यताम्।। अरे चित्त! चंचलताको छोड़कर सामने तराजूके दोनों पलड़ोंमेंसे एकमें सब विषयोंको और दूसरेमें भगवान्

(ग) न मुक्तिद्वीरि चतुर्विधापि किमियं दास्याय न मे लायते।—बोधसार:

(घ) अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादरि भगति लुभाने॥ जनम् जनम् रित रामपद् यह ब्रुर्तन् न आन्॥ (श्रीतुलसीकृत रामायण) Hinduism Discord Server https://dsc.go/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha २. यस्तु सर्वाण भूतान्यात्मन्यवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मले तेता न विजुगुप्सते॥ (इशावास्यापनिषद् ६) संख्या ११] कहानीका असर कहानी— कहानीका असर (मास्टर श्रीपारसचन्दजी) कई साल पहलेकी बात है। मि॰ सप्रू, इटावामें फूलोंकी गमक! तीन मिनट भी नहीं बीते; दासी टपसे डिप्टी कलेक्टर बनकर आये। एक दिन एक विचित्र सो गयी! घटना घटी। सप्रूजी भोजन करके पलंगपर लेटे हुए थे। सप्र—अरे! फिर क्या हुआ! शामत आयी होगी? मनोहर—एक घण्टेके बाद भोजन करके बादशाह रातके दस बजेका समय था। मनोहर नाई चरणसेवा कर सलामत आराम करने आये। पूरनमासीकी चाँदनी थी ही, रहा था। सप्रू—मनोहर! कोई कहानी सुनाओ! बादशाहने तुरंत जान लिया कि पलंगपर दासी सो रही है। मनोहर—आपको मैं क्या सुना सकता हूँ ? आपने सप्र — गजब हो गया! हजारों किताबें पढ़ी हैं और लाखों कहानियाँ सुनी हैं। मनोहर—बादशाहने दासीको जगाया। जमीनपर आप रोज जो मुकदमे करते हैं, वे सब कहानियाँ ही तो खड़ी होकर, मारे डरके, दासी थर-थर कॉॅंपने लगी। हैं। आप कुछ कहें और मैं सुनूँ! हाथ जोड़कर चरण पकड़ लिये और फूट-फूटकर रोने सप्र — नहीं मनोहर! तुम्हीं कोई कहानी कहो। लगी। बादशाहने कहा कि इस कसूरकी बिलकुल माफी मनोहर-आप नहीं मानते तो सुनिये। बीच-नहीं हो सकती। हलकी सजा दी जायगी। बीचमें 'हूँ' जरूर कहते जायँ। नहीं तो आप सो जायँ सप्र-अच्छा! फिर? और मैं बकता रहूँ। मनोहर—बादशाहने बेगम साहेबाको बुलाया और सब माजरा कह सुनाया। इसके बाद बादशाहने बेगमसे सप्र-अच्छा! मनोहर—अरबमें एक बादशाह था। एक रातको कहा कि आप ही इस दासीकी सजा तजबीज करें; दासीने छतपर बादशाहका पलंग बिछाया। गरमीके दिन क्योंकि इसने आपका ही अपराधविशेष किया है। थे। छतपर केवड़ेका छिड़काव किया गया था। सप्र—ठीक! फिर? मनोहर—बेगम साहेबाने कहा कि इसने साठ सप्र—हुँ! मिनट पलंगपर व्यतीत किये हैं, इसलिये साठ बेंतकी मनोहर—सोनेका पलंग था, रेशमकी निवारसे भरा गया था, कालीन बिछा था, उसपर गद्दा बिछा था, फिर सजा दी जाती है। एक कालीन बिछा था, उसपर सफेदी बिछी थी। आमने-सप्रू—बहुत सख्त सजा दे दी! मनोहर - रुतबा पा जानेपर आदमी कसाई हो सामने, अगल-बगल चार तिकये रखे थे और फूलोंसे सेज सजाकर, दासी उस पलंगकी शोभा एकटक देख रही थी। जाता है ! सप्र—हाँ, हूँ, आगे चलो! सप्रु—हुँ! मनोहर—दासीके मनमें विचार आया कि पाँच मनोहर-सजा सुनकर बादशाहके भी होश उड़ गये। बादशाहने सोचा कि अगर किसी आदमीने बेंत मिनट इस पलंगपर लेट लेना चाहिये। मैं भी तो देखूँ लगाये तो यह साफ मर जायगी। कि कैसा लगता है! मन होता है शैतान! दासी, बादशाहके पलंगपर लेट गयी। सप्र—हूँ! मनोहर—तबतक बेगम साहेबाने खुद ही कहा सप्र-अच्छा! फिर? कि बेंत मैं ही लगाऊँगी। खूँटीपरसे चमड़ेका बेंत मनोहर—दासी थी बेचारी दिनभरकी थकी और मॉॅंदी! ऊपरसे लगी ठण्डी हवा और नीचेसे उठी उठाकर बेगम साहेबाने चार-पाँच हाथ करारे जमा

भाग ९० दिये। बेचारी दासी रोती हुई गिर पड़ी। उसके बाद बेगम शहरभरमें खबर फैल गयी कि फर्स्ट क्लास साहेबा थक गयीं। औरतकी जात मुलायम होती ही है! मजिस्ट्रेट मिस्टर सप्रू ५५०/- मासिकपर लात मारकर सप्र—हंं! फक़ीर हो गये! बंगलेके द्वारपर एक इमलीके नीचे, एक मनोहर -- बादशाह एक-दो-तीन-चार-पाँच कहकर कम्बलपर, डिप्टी कलेक्टर, फक़ीरी भेषमें बैठे हैं। गिनती गिनने लगे। तीस बेंततक दासी जार-जार रोती बात-की-बातमें कलेक्टर साहब, सुपरिण्टेण्डेण्ट रही। परंतु, इसके बाद दासीकी मित पलट गयी। तीससे पुलिस, जिलेके शेष तीन डिप्टी कलेक्टर और कोतवाल साठतक दासी खूब हँसती रही। साहब घटनास्थलपर जा पहुँचे। कलेक्टर-वेल मिस्टर सप्रू! टुमको क्या हो सप्र—सो क्यों? गया? टुम कलेक्टरीके वास्ते नामजद हो गया है। टुमने मनोहर—धीरज रखिये। सब बातें आप-ही-आप खुलती जायँगी। यह इसटीपा क्यों भेजा? अम टुमारा इसटीपा मंजूर करने नहीं माँगटा! सप्र—अच्छा, हाँ! मनोहर—सजा समाप्त होनेपर बादशाहने दासीसे सप्र—अभीतक सरकारकी नौकरी की, अब पूछा कि तू पहले रोयी क्यों और पीछे हँसी क्यों? मालिककी नौकरी करूँगा। दासीने कहा कि चोटके कारण रोयी थी। परंतु, जब यह कलेक्टर—पिकीरी करेगा पिकीरी? चौबीस घण्टेमें समझमें आया कि मैंने एक घण्टा पलंगपर बिताया तब पाँच घण्टा सरकारी काम करो और बाकी वक्तमें पिकीरी तो साठ बेंत लगे और बादशाह सलामत रातभर सोते हैं करो। टुम बी राम राम करना—अम बी राम राम करेगा। सो इनकी न मालूम क्या दशा होगी! पलंगकी सजासे सप्र—सजा देनेवाले नहीं जानते हैं कि उनके बेगम साहेबा भी न बचेंगी। आप दोनोंपर अनिगनती बेंत लिये किस सज़ाकी तजबीज हो रही है। इस बातने मेरा कलेजा काट दिया। पड़ेंगे। अत: यह सोचकर मैं हँसी कि सजा देनेवालोंको तहसील भरथनाके डिप्टी कलेक्टरने कलेक्टरसे अपनी सजाकी खबर ही नहीं है। जिस तरहसे पलंगपर मुझे सोता देख आप क्रोधित हुए, उसी तरह आपको कहा—'हज़्र! 'ज्ञानकी बात कृपानकी धारा'—यानी पलंगपर सोता देख, खुदा कुपित होता है। मेरे हँसनेका तलवारकी तरह बात भी काट करती है। मेरा मँझला यही कारण है। इतना सुनते ही बादशाहकी बुद्धि बदल भाई जिला बाँदामें तहसीलदार था। एक रोज उसने देखा गयी। बादशाहने ताज फेंक दिया, इमामा फेंक दिया, कि एक काले साँपने एक मेंढक पकड़ा और निगल जामा फेंक दिया और जूते फेंककर फकीरी कफनी पहन गया। भाईने सोचा कि इसी तरह एक दिन मौतका साँप, ली। रामचन्द्रजी दिनको वनकी ओर चले थे, बादशाह मुझ मेंढकको गटक जायगा। उसी वक्त वह साधू हो ठीक आधी रातको वनगामी हो गया। गया। आजतक पता नहीं कि कहाँ है।' कलेक्टर-मिस्टर सप्रू! अगर मेरी बातपर टुम सप्र—वाह! वाह! The duty is the beauty. मनोहर—अंग्रेजीमें क्या मुझे गाली देने लगे? नजर नहीं डालता तो न सही। वह देखो, टुमारी सप्र—नहीं, मनोहर! तुमने बहुत अच्छा किस्सा खुबसुरत और तालीमयाफ्ता बीबी, फाटकपर हाथ रखे कहा। लेकिन अब हमको भी इस पलंगसे उतरना रो रही है। टुमारा छोटा-सा बच्चा भी रो रहा है। टुमारे चाहिये। बिना टुमारे मेम साहबका क्या हाल होगा? टुमारा बच्चा कैसे तालीम पायेगा? बच्चेको पढ़ा-लिखा दो, तब Duty is beauty इतना कहकर वह पलंगपरसे उतर पड़े और पृथ्वीपर कम्बल बिछाकर लेट गये। पिकीर होना। तब हम बी पिकीर होगा। सप्र—नहीं हज़र! भूखी-प्यासी, थकी-माँदी संख्या ११] विश्वका कल्याण हो पबलिकका पैसा, वेतनके रूपमें लेकर मैंने जो पलंग-कुछ आप खाते और बाकी बन्दरोंको खिला देते थे। बाज़ी की है, उसकी सजा मुझे जरूर मिलेगी। अब मैं फटी कमलीके सिवा कोई वस्त्र पास नहीं रखते थे। इस किसी दूसरेका इंसाफ नहीं करूँगा—खुद अपना इंसाफ प्रकार इटावाके एक डिप्टी कलेक्टरने इटावामें ही बारह करूँगा। जो अपना इंसाफ नहीं करता, वह दूसरोंका क्या साल घोर तपस्या की। इंसाफ करेगा? 'खट-खट' करते रहनेसे पबलिक उनको 'खटखटा सबने समझाया-पर सब व्यर्थ। लाचार होकर कलेक्टर साहबने इस्तीफा ले लिया। मनोहर नाई छाती बाबा' कहने लगी। एक बार खटखटा बाबाने भण्डारा पीट-पीटकर श्रीमती सप्रुके चरणोंमें लोट रहा था और किया। घीकी कमी पड़ गयी। कड़ाही चढ़ी हुई थी-कह रहा था कि 'मैंने नहीं जाना था कि कहानीमें भी शहर दूर था। आपने एक चेलासे कहा कि दो कलसा असर होता है, नहीं तो यह कहानी नहीं कहता!' यमुना-जल लाकर कडाहीमें छोड दो। वैसा ही किया गया। यमुनाका जल घी बन गया। पूड़ी सेंकी गयी। शहर इटावासे एक मील दक्षिणमें यमुनाजी हैं। एक बार कोई सिद्ध यमुनाजीकी बीच धारामें पद्मासन एक पक्के घाटपर भूतपूर्व डिप्टी कलेक्टर श्रीयुत सप्रूजी लगाये बैठा हुआ चला जा रहा था। खटखटा बाबाको बैठे हैं। फटी कमली है और एक मोटा सोटा है। देखकर कहा कि 'पानी पिला जाओ।' बाबाजी भी लोटामें यमुनामें खडे होकर आप घाटपर सोटा खटखटाया करते जल लेकर, यमुनामें स्थलकी भाँति चलने लगे। पानी पीकर थे और कभी-कभी कहते थे-महात्माने कहा—'तुम भी सिद्ध हो गये!' 'लगा रहा खटका!' खटखटा बाबाकी समाधिपर अब अनेक इमारतें बन 'खटकेका खटका—खट पट करता रह!!' गयी हैं। समाधिका मन्दिर और विद्यापीठकी इमारत 'मत मिटना—खटखटा!!!' दस बजेके करीब झोली लेकर आप भिक्षा लेने दर्शनीय हैं। सहस्रों प्राचीन पुस्तकोंका अपूर्व संग्रह किया गया है। सालमें एक बार मेला लगता है। भारतके विद्वानों, शहरमें जाते थे। पबलिक उनको पहचानती तो थी ही। योगियों और पण्डितोंको निमन्त्रण देकर बुलाया जाता सभी चाहते थे कि आज हमारे द्वारपर आयें। रोटी लेते थे-रोटियोंको लेकर उस झोलीको यमुनाजीमें डुबाते है। खुब व्याख्यान होते हैं। खटखटा बाबाकी समाधि थे। तदनन्तर उस झोलीको एक इमलीकी शाखमें लटका इटावाका तीर्थस्थान है। इटावा जिलेका बच्चा-बच्चा देते थे। चार बजेतक झोली लटकती रहती थी। फिर खटखटा बाबाके नामसे परिचित है। विश्वका कल्याण हो स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया। भजतादधोक्षजे आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी॥ (श्रीमद्भा० ५।१८।९) [हे नाथ!] विश्वका कल्याण हो, दुष्टोंकी बुद्धि शुद्ध हो, सब प्राणियोंमें परस्पर सद्भावना हो, सभी एक-दूसरेका हित-चिन्तन करें, हमारा मन शुभ-मार्गमें प्रवृत्त हो और हम सबकी बुद्धि (निरन्तर) निष्कामभावसे भगवान् श्रीहरिमें संलग्न (लगी) रहे।

श्रीसिद्धारूढ स्वामी संत-चरित (ह० भ० प० श्रीलक्ष्मण रामचन्द्रजी पांगारकर)



निजामराज्यके विद्रीकोट नामक गाँवमें संवत् १८९३ ई० में चैत्र शुक्ल नवमीको किसी श्रीमान् कुलमें इनका जन्म

हुआ। इनके घर नित्य श्रीमद्भागवत और वेदान्तके प्रवचन हुआ करते थे। इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी और बचपनसे ही वैराग्यके लक्षण इनमें दृष्टिगोचर होते थे।

ये प्रवचन सुनते थे और फिर एकान्तमें जा बैठते थे, अन्य बालकोंकी तरह खेल-कूदमें इनका मन नहीं

लगता था। भोजनके समय इन्हें ढूँढ़कर लाना पड़ता था। इस प्रकार चौदह वर्ष ये अपने घर माता-पिताके पास

रहे फिर एक दिन घरसे जो निकले सो फिर कभी घर लौटे ही नहीं। एक लँगोटी ही पहने, कन्धेपर एक चीथड़ा डाले, अगृही होकर जंगलोंमें विचरने लगे। भूख

लगनेपर किसी गाँवमें चले जाते और करतल भिक्षा पा लेते थे। रातको किसी मन्दिर या मसजिदमें या वृक्षके

नीचे पड़े रहते। इस तरह विचरते हुए औंदिया नागनाथ पहुँचे। वहाँ इन्हें एक सिद्ध पुरुषका सत्संगलाभ हुआ, जिससे ये कृतार्थ हुए। एक तो तप्त भूमि, दूसरे उसमें

और बोझा उतारकर चल दिये। साह्कार उन्हें कुछ मजूरी या इनाम दिया चाहते थे, पर इनका पता नहीं

इस चर्याके साथ कुछ वर्ष बीजापुरमें रहकर पीछे ये गोकर्ण पहुँचे। रास्तेमें दो-दो दिन बिना कुछ खाये

चला।

रह जाते, चाहे धूप हो या ठण्ड कहीं भी पड़े रहते, कभी-कभी केवल दूध ही पी लेते और कभी केवल जलसे ही निर्वाह करते। कभी किसीसे अधिक बोलते

नहीं थे। सदा स्वरूपानन्दमें निमग्न रहते और जो कुछ दृष्टिके सामने आता उसे देखते, कुछ भी खाकर पेटकी

ज्वालाको शान्त करते, जो फटा-पुराना कपड़ा मिल जाता, उसीसे बदनको ढक लेते। गोकर्णमें कुछ दुष्टोंने इनके सर्वांगमें अमंगल पदार्थका लेप करके इन्हें गधेपर

न इन लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध कोई जरा-सी भी हरकत ही की। इस सिहष्णुताकी बलिहारी है! गोकर्णसे ये घूमते-घामते हुबली आये। हुबलीकी

पुरानी बस्तीसे डेढ़ मीलपर आमकी एक बगिया है, उसमें एक छोटी-सी तलैया है। चरवाहोंके लड़के यहाँ

बैठाकर इनका जुलूस निकाला। पर इन्होंने चूँ नहीं की,

ही अंकुर निकल आये। यहाँसे फिर सिद्धाप्पा लौटे और घूमते-घामते बीजापुर पहुँचे। यहाँ भी उनकी चर्या जडान्धबधिरवत् ही रही। दिनमें करतल-भिक्षा करते, रातको किलेके श्रीनृसिंहदेवालयमें जाकर सो रहते। एक दिन रातके समय ये अपने शयनके स्थानको जा रहे थे। रास्तेमें किसी साहुकारकी बारात जा रही थी। बारातका एक मजूर अपना बोझ नीचे रखकर निकल भागा था। लोगोंने वह बोझ उठानेके लिये बेगारमें इन्हें पकडा। इन्होंने बोझ उठा लिया, बारातको ठिकाने पहुँचा दिया

खेला करते थे। इन लड़कोंके साथ ये भी खेलने लगते थे। यहीं किसी सिद्ध पुरुषकी एक कोठरीनुमा समाधि ्रमाnduism Discord Server https://सिंद नुष्ट्रीतharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shr

संख्या ११] श्रीसिद्धार	^९ इंट
**************************************	**************************************
दिनमें गाँवसे भिक्षा माँग लाते या चरवाहोंके लड़कोंसे	और अरबी भाषाएँ अच्छी तरहसे बोल सकते थे। उनके
ही कुछ लेकर खा लेते थे।	भाषणोंमें अद्वैतके सिवा और दूसरी बात ही नहीं आती
एक बार भिक्षा मॉॅंगनेके लिये गॉॅंवके किसी	थी। ब्राह्मण, लिङ्गायत, सुनार, पटेगार, मुसलमान—इन
गृहस्थके यहाँ गये। वहाँ उस समय योगविषयक किसी	सभी जातियोंके स्त्री-पुरुष इनके पास जाते और इनकी
ग्रन्थका निरूपण हो रहा था। ग्रन्थमें एक ऐसी पंक्ति	भक्ति करते थे। इनकी वृत्तिमें ऐसी अलौकिक शान्ति थी
निकली, जिसका अर्थ वक्ता-श्रोता किसीकी भी समझमें	कि दुष्ट-से-दुष्ट मनुष्य इनके समीप आकर शान्त हो
नहीं आ रहा था, इससे सब लोग चुप बैठे थे।	जाता था। स्वयं सब विषयोंसे उदासीन रहते हुए भी
सिद्धाप्पाको बोलनेकी स्फूर्ति हुई और उन्होंने खड़े–खड़े	समागत भक्तोंका स्वागत करनेमें कोई त्रुटि नहीं होने देते
ही वह विषय सुबोध भाषामें समझा दिया। वक्ता-श्रोता	थे। लौकिक बातें इनके मुखसे प्राय: कभी नहीं सुनी
अधिकारी थे। उन्होंने जाना कि ये कोई सिद्ध पुरुष हैं	गयीं। वे संस्कृत नहीं जानते थे तथापि भाष्यादि ग्रन्थोंके
और सबने उनके चरणोंपर मस्तक रखा। मकानमालिकने	गहन शास्त्रीय विषयोंको इतना विशद करके समझा देते
तो उन्हें उस रातको अपने ही घर टिकाया और उनकी	थे कि उनकी बात और इन ग्रन्थोंकी बात बिलकुल मिल
बड़ी खातिर की और बार-बार अपने ही यहाँ रह	जाती थी और कभी-कभी ऐसी बातें भी कहते थे, जो
जानेका आग्रह करने लगे। सिद्धाप्पा चुप रहे और बिना	ग्रन्थोंमें नहीं मिलतीं। प्रतीतियुक्त वाणी होनेसे उनके
किसीसे कुछ कहे रातों-रात वहाँसे निकल भागे। अब	भाषणका श्रोताओंपर तुरन्त और उत्तम परिणाम
जो लोग उनकी वाणी यहाँ सुन चुके थे, उन्हें उनकी	होता था।
वाणीका चसका लग गया और वे नित्य उनके खेलनेके	स्वरूपसाक्षात्कार होनेके पश्चात् ब्रह्मवेत्ताओंकी
स्थानमें जाकर उनकी वाणी श्रवण करने लगे; इन्हें भी	वृत्ति बालोन्मत्तपिशाचवत् ही रहती है, यही प्राय:
भाषणका स्फुरण होने लगा और ये खेल छोड़कर इन	देखनेमें आता है। अक्कलकोटके स्वामी, फलटणके हरि
श्रद्धालु श्रोताओंके बीचमें बैठकर गूढ़ विषयोंका बड़ा	बुवा, वाईके गोपाल बुवा ऐसी ही स्थितिमें थे। ऐसे
हृदयग्राही निरूपण करने लगे। लोग आनन्दित होने लगे	पुरुषोंसे दर्शन और स्पर्शका ही लाभ होता है, सम्भाषणका
और इनकी भक्ति करने लगे। इनकी ब्रह्मनिष्ठा देखकर	लाभ प्राय: नहीं होता। परंतु सिद्धारूढ स्वामीकी यह
लोग इन्हें सिद्धारूढ कहने लगे। तभीसे ये सिद्धारूढ	विशेषता थी कि ब्रह्मविद्वरिष्ठकोटिके संत होनेपर भी
स्वामीके नामसे प्रसिद्ध हुए।	इनका रहन–सहन किसी सामान्य मनुष्य–जैसा ही था।
इनका रहन–सहन बहुत सादा, निस्पृह और प्रखर	बड़ी शुद्धतासे रहते थे; सुँघनी या सुपारीका भी इन्हें
वैराग्यका नमूना था। इनका परिग्रह एक लॅंगोटी, एक	व्यसन नहीं था। सिला हुआ कपड़ा ये कभी पहनते न
धोती और शिरमें लपेटनेका दो हाथ कपड़ा, बस, इतना	थे, पैरोंमें कभी जूता भी न देते थे और सादगी क्या
ही था। देहके विषयमें सदा उदासीन रहते थे, देहमें चाहे	होगी? ऐसा सादा रहन-सहन होनेके कारण इनके
जैसी व्याधि या पीड़ा होती तो भी ये कभी ओषधिसेवन	दर्शन, स्पर्श और सम्भाषणका यह विविध लाभ सबको
नहीं करते थे। अनशन ही इनका औषध था। इनका	होता था।
निरूपण अनुभव-युक्त, सरल और मुमुक्षुओंके हृदयोंको	महाराजके स्वैर आलाप कितने उपदेशमय होते थे,
बेधनेवाला होता था। इनके शब्दोंमें कुछ ऐसी विलक्षण	इसका दिग्दर्शन करानेके लिये उनके कुछ सूत्रवाक्य
सामर्थ्य थी कि सुननेवाले तल्लीन हो जाते थे और	नीचे देते हैं—
सबकी शंकाओंका पूर्ण समाधान होता था।	१-भीतर बुखार न होना चाहिये, बाहर हो तो
महाराज मराठी, कानड़ी, तिमल, तेलगु, हिन्दी	हुआ करे।

२-मिताहार ही सात्त्विक आहार है। १०-सुखकी अनुकूलताके बिना मनकी प्रवृत्ति नहीं होती। इसलिये जहाँ-जहाँ मन जाता है, वहाँ-वहाँ सुख ३-मनुष्यकी परीक्षा नेत्रोंसे, बातचीतसे और संग-

साथसे होती है। उत्तरोत्तर कनिष्ठ परीक्षा जाने। ४-दोषोंको दोष दीखते हैं अर्थात् स्वयं अनुभव किये बिना दोष नहीं दीखते; इसलिये दूसरोंके दोष

गुरुदोषदर्शनतक पहुँचती है।

ज्ञानी इसे वस्तुस्वभाव जानकर निर्मोह रहते हैं।

भी सुख तुम्हारा पीछा न छोड़ेगा।

उसी आसक्तिके त्यागको वैराग्य कहते हैं। ८-जो बात जैसी है, उसे वैसा ही जानना ज्ञान

९-प्रतिबन्धके न रहते प्रतिबन्धका होना मानना ही

प्रतिबन्ध है।

कहाता है।

७-स्त्री-पुत्रादि विषयोंमें जो आसक्ति होती है,

भोगेच्छा-इस त्रयीका त्याग करो तो सुख न चाहोगे तो

६-प्राप्त भोग-मोह, भुक्त भोगस्मरण और अप्राप्त

होते हैं। अज्ञानी मोहके वश होकर दुखी होते हैं और

५-कनक, कान्ता, पुत्र आदि स्वभावतः ही मोहक

देखनेकी आदत न डाले; यह आदत बढ़ते-बढ़ते

सूर्य-प्रकाशको देखना छोड़ खिड़िकयोंके छिद्रोंमेंसे उस

प्रकाशको देखना है।

महाराजके भक्तोंने हुबलीकी उसी आमकी बगियामें महाराजके लिये एक मठ बनवा दिया। यह इतना बड़ा है कि उसमें दो-तीन सौ आदमी रह सकते हैं। इस

मठका वातावरण महाराजके कारण अब भी परिशृद्ध,

होता ही है।

शान्त और दिव्य है। जो कोई वहाँ जाते हैं, उनका मन स्थिर-शान्त होकर वहाँसे हटना नहीं चाहता। मठके

शिवाय। संवत् १९८६ ई० में भाद्र कृष्ण १ को आपने अन्तिम समाधि ली। (संतचरित्रमालासे)

११-विषय-भोग सुखके साधन नहीं हैं, यदि होते

१२-आजकलकी हालतमें योगसाधन करना आँगनके

तो सुषुप्तिमें विषयाभावके होते सुख न होता।

सामने एक स्वच्छ सरोवर है। शिवरात्रिके अवसरपर अष्टमीसे चतुर्दशीतक यहाँ बड़ा ही उत्सव होता है, उत्सवमें अखण्ड नामजपका एकमात्र मन्त्र है, 🕉 नम:

िभाग ९०

उदार व्यवहार हर स्थितिमें प्रसन्नतादायक

श्रीताराकान्तराय बंगालके कृष्णनगर राज्यमें उच्च पदपर आसीन थे। नरेश उन्हें अपने मित्रकी भाँति मानते

थे। बहुत समयतक उन्होंने राजभवनके ही एक भागमें निवास किया। जाड़ेकी ऋतुमें एक दिन वे बहुत अधिक रात बीतनेपर जब अपने शयन-कक्षमें पहुँचे तो वहाँ उन्होंने देखा कि उनका एक पुराना सेवक उनकी शय्यापर

पायँतानेकी ओर सो रहा है। श्रीरायने एक चटाई उठायी और उसे बिछाकर चुपचाप भूमिपर सो गये। कृष्णनगरके

नरेशको सबेरे-सबेरे उन्हें एक आवश्यक सन्देश सुनाना था। शीघ्रतावश नरेश स्वयं श्रीरायको वह सन्देश सुनाने उनके शयन-कक्षकी ओर चले आये। नरेशने उनका नाम लेकर पुकारा, इससे रायमहोदय हड़बड़ाकर उठ बैठे।

शय्यापर सोया नौकर भी जाग गया और डरता हुआ एक ओर खड़ा हो गया।

राजाने समाचार सुनानेसे पहले पूछा—'राय महाशय! यह क्या बात है, आप भूमिपर सोते हैं और सेवक शय्यापर ?' श्रीरायने नम्रतापूर्वक कहा—'मैं रातमें लौटा तो यह शय्याके पायँताने सो गया था। मुझे लगा कि इसका

स्वास्थ्य ठीक नहीं होगा अथवा काम करते-करते बहुत अधिक थक जानेसे शय्यापर तनिक लेटते ही इसे नींद आ गयी होगी। जगा देनेसे इसे कष्ट होता और चटाईपर सो जानेमें मुझे कोई असुविधा नहीं थी; अपित् इसमें मुझे प्रसन्तता ही हुई।'

संख्या ११] दानके दुष्टान्त कहानी-दानके दृष्टान्त (श्रीरामेश्वरजी टाँटिया) एक दिन अपने किसी मित्रके साथ एक संस्था 'तुम लोग कुछ काम करना नहीं जानते, कल इनको देखने गया। वहाँके पंखोंकी तीनों पंखुड़ियोंपर बड़े-बड़े अक्षरोंमें उनके द्वारा दानकी घोषणा लिखी हुई थी। इस सन्दर्भमें जब मैंने कुछ नहीं कहा, तो वे स्वयं बोले-पिछले वर्ष ये चारों पंखे हमने ही दिये हैं। मुझे लगा कि यहाँ आनेवाले अधिकांश लोगोंसे वे यही बात दुहराते हैं। मैंने हँसकर कहा-यह तो इतने बड़े-बड़े अक्षरोंमें विज्ञापनसे ही पता चल जाता है। देखा कि मेरी बात सुनकर वे कुछ झेंप-से गये। अच्छी तरहसे सुखाओ।' इशारा स्पष्ट था। वैसे दान देकर नाम-बड़ाई सभी लोग चाहते हैं, दूसरे दिन अशर्फियाँ एक पाव कम थीं, शाहजी परंतु इसकी भी एक सीमा होनी उचित है। आज खुश थे। सूखी हुई अशर्फियाँ वापस तहखानेमें रख दी गयीं। इसी तरह जबतक वे जीये, जरूरतमन्दोंको गुप्त अधिकांश दानी सौ देकर पाँच सौका नाम चाहते हैं, परंतु आजसे चार सौ वर्ष पहले प्रसिद्ध दानवीर रहीमको रूपसे हर प्रकारकी सहायता देते रहे। यहाँतक कि एक किसीने पूछा था कि आप दान देते समय आँखें नीची हाथका दिया दूसरे हाथको पता नहीं चलता। लोग उन्हें क्यों रखते हैं? इसपर उन्होंने उत्तर दिया-झक्की समझते और प्रेमपूर्ण हँसीमें 'झक्कडशाह' कहने लगे। उनके परिवारवालोंने बड़ाबाजारके प्रसिद्ध मनोहरदास देनहार कोऊ और है, भेजत है दिन रैन। कटराके साथ-साथ धर्मतलाके मैदानमें मनोहरदास तालाब लोग भरम हम पर धरें, यातै नीचे नैन॥ खानखाना अब्दुल रहीम अद्भुत दानी थे, परंतु उस बनवाया था। इसके चारों तरफकी छतरियोंसे आज भी तरहके कुछ व्यक्ति बिरले ही होते हैं। इस सन्दर्भमें सैकड़ों व्यक्ति धूप तथा वर्षामें आश्रय लेते हैं और उनके द्वारा छोड़ी हुई गोचर-भूमिमें सैकड़ों जानवर चरते रहते

हैं।

विभिन्न समयके दो चित्र उपस्थित करता हूँ। देशके प्रसिद्ध नेता श्री श्रीप्रकाशजीके पूर्वजोंमें दो सौ वर्ष पहले इसी प्रकारके एक दानवीर हो गये हैं।

उनके यहाँ बीसियों नौकर-चाकर तथा मुनीम-गुमाश्ते

थे, जिनका वेतन एक रुपयेसे दस रुपये माहवारतक था।

एक बार लगातार दो वर्षोंतक अकाल पडा, चीजोंके दाम महँगे होते गये। सर्वसाधारणके भूखों मरनेके दिन

आ गये। शाहजीने एक दिन तीन-चार मुनीमोंको

बुलाकर कहा कि बहुत दिनोंसे तहखानेमें पड़ी रहनेके

कारण अशर्फियाँ गीली हो गयी हैं, इसलिये इनको धूपमें

सुखा लो। शामको तौलनेपर अशर्फियाँ उतनी ही रहीं,

भला सोनेका क्या सूखता? शाहजीने उनको कहा—

बात याद आ जाती है। पौष-माघमें इस क्षेत्रमें बहुत ज्यादा सर्दी पड़ती है। कभी-कभी तो रातमें बाहर रखा हुआ पानी जमकर बर्फ हो जाता है। ऐसी ही एक रातमें सेठजीने गीदड़ोंकी 'हुआँ-हुआँ' सुनी। दूसरे दिन पण्डितोंको बुलाकर पूछा, तो उन लोगोंने बताया कि ज्यादा सर्दीके कारण सब ठिठुर रहे हैं। गीदड़ोंकी संख्या पूछनेपर—चौदह-पन्द्रह सौ बता दी और उतनी ही रजाइयोंकी आवश्यकता भी। सेठजीने गुस्सेसे कहा—'महाराज, ऐसा अन्धेर क्या करते हैं! पन्द्रह

इस प्रसंगमें, रामगढ़ (शेखावटी)-के एक सेठकी

भाग ९० ************************* सौ में पाँच सौ बच्चे भी तो होंगे, उनको अलग रजाईकी रुपयेकी जरूरत है, इससे कममें किसी तरह भी काम क्या जरूरत है ? वे तो माँ-बापके साथ ही सो जायेंगे।' पार नहीं पडेगा।' रफी साहबके पास अपना तो था ही खैर, दो-तीन दिनोंमें ही हजार रजाइयाँ भरवाकर क्या? परंतु उनके कुछ ऐसे मित्र थे, जो उनकी ऊलजलुल फरमाइशोंको भी पूरी करते रहते थे। खैर, पण्डितोंकी मार्फत भेज दी गयीं। सेठजी हँसकर मित्रों और सेठानीको कह रहे थे—'मुझे ठगना सहज नहीं है। उसको तीन हजार रुपये दिला दिये। देखो, किस प्रकार पाँच सौ रजाइयोंकी बचत कर ली!' उसके जानेके बाद स्व० बालकृष्ण शर्मा नवीनने कहा—'रफी! तुम भी अव्वल दर्जेके बेवकुफ हो, दूसरी रात फिर गीदडोंकी दर्द-भरी पुकार सुनकर सेठजीकी नींद उचट गयी। पूछनेपर उत्तर मिला-फिजूलमें रुपये ठगा बैठे। उस भलेमानुसकी शादी तो हुई 'श्रीमान्! रजाइयोंसे सर्दी तो मिट सकती है, परंतु पेटकी ही नहीं, फिर यह बेटी कहाँसे आ टपकी ?' किदवईजीने भूख नहीं, बेचारे कई दिनोंसे भूखे हैं, इसीलिये रो रहे मंजूर किया कि वे भी जानते हैं कि न तो उसकी शादी हुई है और न उसकी बेटी है। फिर तो त्यागीजीने हैं। दूसरे दिन बहुत-सा हलुआ-पूड़ी बनवाकर भेज दिया गया। अगली रात फिर वही आवाजें आयीं। किदवईजीको बुरा-भला कहना शुरू किया—'वजारतसे लिहाजा, फिर पण्डितोंको बुलाया गया। इस बार हँसते कुल बाइस सौ रुपये मिलते हैं, वे तो नवाब साहब चार-हुए उन्होंने कहा—'सेठजी! वे अच्छी तरह खा-पीकर पाँच दिनोंमें खर्च कर दिया करते हैं। भला, यह भी कोई आरामसे रजाइयाँ ओढ़कर बैठे हैं। आपको आशीर्वाद बात हुई?' देखा गया कि किदवईजीकी आँखोंमें आँसू आ दे रहे हैं कि रोज इसी तरह देते रहेंगे।' मुनीमोंने सेठजीको बहुत कहा कि इन पण्डितोंने गये, कहने लगे—'भाई मेरे, यह बेचारा जरूर किसी आपको ठग लिया है, भला कहीं गीदड़ भी रजाइयाँ आफतमें पड़ गया होगा, तभी तो बेटीकी शादीका नाम ओढ़ते हैं या पंगत लगाकर हलुआ-पूड़ी खाते हैं? परंतु लेकर रुपये मॉॅंगने आया था। भला, मैं उसको बेईमान सेठजी किसी तरह यह स्वीकार करनेको तैयार नहीं थे। साबित करने बैठता या मुसीबतमें थोड़ी-सी सहायता शायद मनमें तो वे भी जानते थे, परंतु उनको इस करता? जिनसे दिलाता हूँ, वे तो लखपति-करोड़पति प्रकारके कार्योंसे एक नैसर्गिक आनन्द मिलता था और हैं। उनके लिये १०-२० हजारमें क्या फर्क पडता है?' इसी बहाने गाँवके गरीब ब्राह्मणोंके पास कुछ चीजें कहते हैं कि जब पण्डित नेहरू स्वर्गीय किदवईजीके पहँच जाती थीं। गाँव गये और उन्होंने टूटे खपरैलोंका उनका छोटा-सा ये बातें तो सौ-डेढ सौ वर्ष पहलेकी हैं, परंतु इन मकान देखा तो उन्हें रुलाई आ गयी थी। चारों तरफ दिनों भी ऐसे व्यक्ति हुए हैं। मेरे मित्र श्रीमहावीर त्यागीने गरीबी और अभाव नजर आ रहा था। उन्होंने बेगमसे भारत सरकारके भूतपूर्व खाद्यमन्त्री स्वर्गीय रफी अहमद पेंशन लेनेको बहुतेरा कहा, परंतु उनका जवाब था, किदवईकी एक घटना सुनायी थी, जिसे सुनकर वहाँ बैठे 'जवाहर भाई, मुझे ऐसे शख्सकी बेवा होनेका फख्र हासिल है, जिसने सारी जिन्दगी फाका-मस्तीमें गुजार मित्रोंकी आँखें गीली हो गयी थीं। एक दिन किदवईजी की नई दिल्लीवाली कोठीमें दी, परंतु उम्र-भर दोनों हाथोंसे जरूरतमन्दोंको दिया ही ५-६ मित्र बैठे थे, एक पुराना कांग्रेस कार्यकर्ता आकर दिया। भला, अब मैं जिन्दगीके आखिरी दिनोंमें सरकारसे उदासीभरे लहजेमें कहने लगा—'रफी भाई! लडकी पेंशन लेकर क्या करूँगी ? आखिर मेरा अकेलीका खर्च बह्मीं nहो u गर्भी है is दिवाह इस रहो तास है.//वीर हुनु अन्वहीं कितन Made With 120 रहा हुने Aviral dr. sh संख्या ११] पापका फल पापका फल (पं० श्रीआनन्दस्वरूपजी पाण्डेय) सन् १९३६ ई० की बात है, कृषि-विभागकी ओरसे अपने नौकरकी गोदमें खेलता हुआ देखता तो तुरंत में ढिकया नामक गाँवमें रह रहा था। यह गाँव मुरादाबाद पुकार उठता 'कौशल'! वह मुझे देखते ही किलकारी जिलेमें अमरोहासे मुरादाबाद जानेवाली सडकपर स्थित मारकर हँसने लगता। यह बच्चा मुझे कितना प्रिय था— है।गाँव जमींदारीकी हैसियतसे एक मुसलमान, जो पीरजादे कैसे बताऊँ? उसकी सलोनी सूरत आज भी मेरी कहलाते हैं, उनके पास ठेकेपर था। इन्हीं पीरजादेकी आँखोंके सामने है। यह घटना अपने उसी कौशल-एक कोठी गाँवके बाहर ठीक सड़कपर थी। यहाँपर प्यारेकी स्मृतिमें लिखी जा रही है। अब वह इस नश्वर हिन्द्रके नामपर एक सुनार था। नहीं तो, गाँवमें केवल जगत्में नहीं है। परमात्मा उसकी आत्माको शान्ति दें। मुसलमान ही बसते हैं, जो अपने को तुर्क कहते हैं। एक दिनकी बात है। मेरा दुर्भाग्य प्रबल था। मेरे इस गाँवमें जब मैं पहले-पहल गया तो सौभाग्यसे एक मुसलमान मित्र आये। वे मेरे यहाँ पहले-पहल आये थे। इसलिये उनकी अच्छी मेहमानदारीके लिये मैंने एक हिन्दू नौकर लेता गया था, अन्यथा पानी आदिके लिये जो तकलीफ होती, उसे मैं ही जानता। कोठीके कुछ रुपये खाँ साहबको दे दिये और ताकीद कर दी चारों ओर एक लम्बा-चौड़ा बाड़ा भी था। इसमें माली कि इनके लिये आप जो कुछ अच्छे-से-अच्छे खाना भी मुसलमान ही था। वहाँ अपना पूरा प्रबन्ध कर लेनेपर तैयार कर सकें, कर दें। उसने झटपट तैयारी कर डाली। मैंने अपनी पत्नीको भी बुला लिया। मैंने देखा, वह मुर्गेका एक चूजा भी ले आया था। इस गाँवके मुसलमान अपनेको बहुत हेकड़ समझते उस समय मुझे बहुत क्रोध आया, परंतु मैं कुछ बोल थे। ऐसी स्थितिमें, विशेषकर जब कि हिन्दू-मुस्लिम-न सका। मेहमानदारीके खयालसे मैंने चुप रहना ही प्रश्न जोरोंपर था, स्त्री-बच्चोंके साथ इस मुसलमान-अच्छा समझा। यों तो मैंने उसे पहलेसे ऐसी चीजें अपने प्रधान गाँवमें रहना कुछ अर्थ रखता था। इस समस्याको यहाँ बनानेके लिये मने कर रखा था और वह मेरे डरसे हल करनेका मेरे पास एक ही तरीका था और वह यह बनाता भी नहीं था, परंतु उस दिन मेहमानदारीके लिये कि मैंने अपने मातहतोंमें एक मातहत ऐसा रख लिया, उसने ऐसा कर लिया। मैं खड़ा-खड़ा देख रहा था। जो स्वयं हेकड़ था। वह रामपुरका पठान था। अपने उसने निर्दोष मुर्गेके बच्चेपर अपनी तेज छुरी फेर दी। उसकी गर्दन एक ओर गिरी और धड़ दूसरी ओर ऐसे-वैसे मौकेके लिये उसका रखना मैंने अच्छा समझा। मैंने उसे रहनेके लिये बाहरकी एक कोठरी दे दी। उसने फड़फड़ाने लगा और कुछ देरतक फड़फड़ाता ही रहा। मुझे आश्वासन दिया कि जबतक रामपुरके पठानोंकी यह करुण दृश्य मुझसे देखा नहीं गया, मैं वहाँसे हट गया—कुछ समय बाद मैं यह बात भूल गया। एक हड्डी भी बची रहेगी, तबतक आपके ऊपर किसी तरहकी आँच नहीं आ सकेगी। हुआ भी वैसा ही। एक मास भी बीता नहीं होगा कि सहसा मेरा कौशल वह मेरे कामके लिये अपने सुख तथा अपनी मर्यादाकी बीमार पड गया। हँसते-खेलते बालककी अस्वस्थतासे भी परवा नहीं करता था। मैं यदि उससे आधी रातमें भी हमलोग घबरा गये। बेचारे खाँ साहब उसकी दवाके लिये कहता कि 'खाँ साहब! आपको अभी अमुक गाँवमें जाना रात-दिन दौड़ते फिरे। कभी किसी हकीमके पास जाते, है और वहाँसे अमुक दवा या अमुक चीज लानी है।' बस, कभी किसी डॉक्टरके पास। तात्पर्य यह कि प्रत्येक सम्भव वह तुरंत तैयार हो जाता था। बहुत आज्ञाकारी था वह। उपचार किया गया, परंतु उससे उसे कोई लाभ नहीं हुआ। कुछ दिनोंके बाद मेरी पत्नीने एक पुत्ररत्न प्रसव दो दिनकी ही बीमारीमें मेरा प्यारा रत्न कौशल चल बसा। किया। यह बच्चा अत्यन्त सुन्दर था। उसकी सुन्दरताकी घरमें रोना-चिल्लाना मच गया। जीवनमें पहला मौका प्रशंसा मैं नहीं कर सकता। मैं दौरेसे आता और उसे था। जब मैं अपनेको सँभाल न सका, फुटकर रो पडा।

बच्चेकी तरह खूब रोया। रोते-रोते हिचकी बँध गयी। हुआ दीखता। उसी समय कौशलको अपनी गोदमें छीने कौशलकी माताका क्या कहना? वह अपने पुत्रके जानेकी बात भी याद करता। यह था मेरे पापका फल। वियोगमें अत्यन्त आकुल रहती थीं। विवश होकर उनके उपर्युक्त घटनाको पढ़कर जगत् भले ही कहे कि कहनेके अनुसार मैं उन्हें घर पहुँचा आया। मेरा हृदय निर्बल है या था। परंतु मैं यह माननेके लिये एक दिनकी बात है, रातके तीन या चार बजे कभी तैयार नहीं हूँ कि किसी चोरको अपने अपराधकी होंगे—मैं सो रहा था। स्वप्नमें जैसे मुझसे कोई कह रहा सजा नहीं भोगनी पड़े, जबतक कि उसे कोई पुराना पुण्यकर्म हलका न कर दे।

था, 'उस दिन यदि तूने मुर्गेके बच्चेकी जान न ली होती

तो तेरा प्यारा बच्चा कौशल नहीं मरता!' अचकचाकर मैं जाग गया। उस समय मुर्गेके बच्चेका फडफडाता हुआ धड़ मेरी आँखोंके सामने दिखायी दिया। मैं जिधर

भी दृष्टि घुमाता, वहीं मुर्गेका बेगुनाह बच्चा फड़फड़ाता

हिंसाका कुफल (श्रीलीलाधरजी पाण्डेय)

'बेटा! मैं किसीको भी इस तालाबकी मछलियोंको नहीं कुछ समय पूर्व बलरामपुरमें झारखण्डी नामक

शिवमन्दिरके निकट बाबा जानकीदासजी रहते थे। वैराग्य एवं सदाचारमय जीवन ही उनका आदर्श था। शिवमन्दिरके निकट पश्चिमकी ओर एक बृहत् सरोवर

अब भी वर्तमान है। उसमें 'सुखी मीन जहँ नीर अगाधा' की भाँति स्वच्छन्द रूपसे असंख्य मछलियाँ निवास करती थीं। मछलियोंके ऊपर बाबाकी करुणाकी छत्रछाया थी। फलस्वरूप किसीको भी तालाबकी मछलियोंको मारनेका

साहस नहीं होता था, यद्यपि तालाबके किनारे मांसाहारियोंकी ही बस्ती थी। बाबाके अहिंसा-व्रतके फलस्वरूप मछलियोंको न मारनेकी घोषणा नगरभरमें व्याप्त थी। एक बारकी बात है कि उस नगरमें एक मुसलमान दारोगा स्थानापन्न होकर आया। बाबाकी घोषणा उसके

कानोंमें भी पड गयी। कट्टर यवन बाबाकी इस घोषणासे जल उठा और उसने तालाबमें मछली मारनेका पक्का निश्चय कर लिया। क्रोधसे जलता हुआ वह बाबाकी

हस्ती देखनेपर उतारू हो गया। फलत: उसने अपने सालेको मछली मारनेके लिये तालाबपर भेजा। किंतु 'जाको राखे साइयाँ मारि सके ना कोय' मध्याह्नतक खोज करते रहनेपर भी एक मछली भी उसके हाथ न आ सकी। बाबाजीने

सुना कि दारोगाजीका साला तालाबमें मछलियोंका शिकार

कर रहा है, तो वे अविलम्ब उसके पास जाकर बोले—

गरीब मछलियोंको न मारो।' बाबाकी बात सुनकर वह सरोष चला गया और घर पहुँचकर सारा समाचार दारोगासे कहा। उसके कथनपर दारोगा क्रोधसे तिलमिला उठा। दूसरे ही दिन अन्य साधनों

मारने देता हूँ। अपनी बंसी निकालकर चले जाओ। बेचारी

इस घटनाके बाद मैंने शपथ कर ली कि अब अपने

द्वारा ऐसा पाप कभी नहीं होने दूँगा और परम पिता

परमात्मासे प्रार्थना करता हूँ कि मेरे जीवनमें ऐसा पाप

बननेका अवसर ही न आने दें।

भाग ९०

और कर्मचारियोंके सहित मछलियोंका शिकार करनेके लिये उसने अपने सालेको यह कहकर भेजा कि 'तुम चलो, काम शुरू करो, हम अभी आते हैं। ' उसने पहुँचते ही मछलियोंको मारना शुरू किया। बाबाजी यह सुनते ही वहाँ पहँचकर कुछ रोषभरे शब्दोंमें उसे फटकारने लगे—

समझकर नहीं माना। जानते नहीं हो, इस तालाबकी मछिलयोंके रक्षक श्रीहनुमानुजी हैं!' तबतक दारोगा भी आ पहुँचा था। वह हनुमानुजीका नाम सुनते ही आगबबूला हो उठा और बाबाको मारनेके लिये अपने सालेको ललकारा। वह बाबापर झपटा ही था कि एक अज्ञात और अदृश्य

'मैंने तुमको कल ही रोक दिया था; किंतु तुमने मुझे शक्तिहीन

शक्तिने उस नराधमको तालाबकी अथाह जलराशिमें विलीन कर दिया। सब लोग भयभीत हो गये और चारों ओर हाहाकार मच गया।

काठसे मारे हुए दारोगाजी किसी भाँति शवको निकलवाकर चुपचाप चले गये!

मेरे वैरि-भावकी रक्षा करना संख्या ११] श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग— मेरे वैरि-भावकी रक्षा करना [युद्धभूमिमें रावणका श्रीरामसे मौन निवेदन] (आचार्य श्रीरामरंगजी) खर-दूषणके वधका समाचार सुनते ही रावण लेनेवाला कोई साधारण मानव नहीं हो सकता। स्वयं स्तब्ध रह गया। उसकी आँखोंमें उनसे सम्बन्धित दृश्य अपने समान बलवान् जानकर जिन्हें लंका-साम्राज्यके घूम गये। उनकी उग्र तपस्या, उसके कारण लोक-सीमा-रक्षकके रूपमें दण्डकारण्यमें अजेय चौदह सहस्र पितामह ब्रह्माजीका प्रकट होना, उनसे रक्ष-प्रकृतिके दुर्धर्ष रक्ष सैनिक देकर, निश्चिन्त बना बैठा था, वे कारण वर माँगना कि 'हम किसीके द्वारा मरें नहीं', अजेय कीर्तिके स्वामी गिद्ध-काक-शृगालोंके भोजन ब्रह्माजीका वरदान कि 'तुम्हें देव-दानव-यक्ष-गन्धर्व-बनकर, धरतीकी धूलिमें लोटकर, कालदेवकी थालीमें किन्नर-वानर-मनुष्य-सरि-सर्प आदिमेंसे कोई भी नहीं दिव्य व्यंजनोंकी सज्जा बनकर रह गये। नहीं-नहीं, इन्हें मार सकेगा, तुम्हारा अन्त केवल तुम्हारे द्वारा ही होगा।' किसी असाधारणसे असाधारण राजाका कोई प्रबल-से-रावण इसका साक्षी था; क्योंकि जहाँ वह कुम्भकर्ण-प्रबल राजकुमार भी यह गति प्रदान नहीं कर सकता। विभीषणके साथ तपस्या कर रहा था, वहीं तो ये खर-हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपुका वध करनेवाले, दानवराज दूषण भी तपस्या कर रहे थे। एक ही समयमें तो बलिकी सत्ताको धराधामसे विस्थापित करनेवाले ब्रह्माजीने इन्हें उसके साथ वरदान दिये थे। देवलोककी श्रीमन्नारायण हरि ही दशरथ-पुत्रके रूपमें इस धरतीपर जो दुर्दशा इन्होंने की थी, उसे सुनकर तो कई कठोर पदार्पण कर चुके हैं। दण्डकारण्यमें अपना पराक्रम दानव भी काँप गये थे। देवराज इन्द्रकी सुधर्मा सभासे प्रकटकर, इस दशकन्धरको अपने आगमनकी सूचना विधिवत् दे चुके हैं। अब मेरा क्या कर्तव्य है? भगवान् वामनका रत्नजटित विशाल विग्रह इन्होंने ही तो उखाडकर पुष्पक विमानमें चढाया था। जिसके दिव्य प्रीतिपूर्वक चरणोंकी शरण ग्रहण करना एक उपाय है, किंतु मेरे कृत्य इस दिशामें मुझे पूर्णत: निरुपाय बना

रत्न निकालकर रावणने उसे लंकाके भयंकर कारागारके प्रांगणमें डलवा दिया था। वे खर-दूषण मारे गये। मल्लक्रीडामें कुम्भकर्ण क्या, स्वयं उसे भी कँपा डालनेवाले, खर-दूषण मारे गये। वे किस कारण परस्पर भिड़कर, कालकी भेंट चढ़ गये? नहीं समझा, परंतु वे नहीं रहे, यह सत्य समझ गया। समझ गया कि वे उसके अन्तकी भूमिकाकी रचना करनेके लिये अपना अन्त कराकर चले गये। यह समाचार उसकी अपनी भगिनी शूर्पणखा दे रही थी, जिसे नकारा नहीं जा सकता था। वह शूर्पणखा दे रही है, जो प्रबल गजराजों और वनराजोंको अपने

पराक्रमसे पालतू पशु बनानेमें सिद्धहस्त मानी जाती रही।

इसकी भनक पड़ते ही यह विशाल राक्षस समूह, जो मुझे अपना परम संरक्षक-अभेद्य कवच-अमोघ ब्रह्मास्त्र मान रहा है, घोर विद्रोही बनकर मुझे कुकर-शुकर बनकर नोंच डालेगा। रक्षेश्वरके रूपमें मुझे मान्यकर, जिन्होंने अनेक ऋषि-मुनियोंको चबा डाला, उनकी खूनी डाढ़ोंकी बाढमें दशाननके रूपमें प्रसिद्ध यह लंकेश्वर नदीतटका एक साधारण वृक्ष बनकर लुप्त हो जायगा। नहीं-नहीं, शरण नहीं रण होगा। उसमें निश्चित रूपसे मरण होगा। अब इस राक्षसेश्वरका एक ही कर्तव्य है कि जिन राक्षसोंको

राक्षस बनाया है, जिन्हें विश्वकी दुर्गतिका कारण बनाया

चुके हैं। श्रीरामका शरणागत होनेका मेरा विचार है,

बलवान्-से-बलवान् मनुष्यको भी गीले वस्त्रकी भाँति है, उस अपनी प्रजाकी सद्गतिका कारण बनूँ।' अपना अन्तिम और साथ ही परम कर्तव्य मानकर, निचोडकर, उसका रक्त गट-गट करके पी जानेवाली वह शूर्पणखा दे रही है, जो स्वयं अपने नाक-कान भेंट रावण संकल्पपूर्वक खड़ा हो गया। वेद-वेदांगके प्रकाण्ड करके आ रही है। यह वह शूर्पणखा है, जिसने पण्डित ऋषिपुत्रने अपने मस्तिष्कमें रक्ष-उद्धारके सम्पूर्ण वरुणदेवके पाशको कच्चे धागेके समान तोडकर उन्हींपर कार्यक्रमकी रूप-रेखा क्षणभरमें बना डाली। श्रीगणेशके फेंक दिया था। उस शुर्पणखाके नाक-कान काट रूपमें सर्वप्रथम मारीचका उद्धार निश्चित किया। लंकामें

केवल एक यही तो था, जिसने श्रीरामसे संघर्ष करनेका दृढ़ संकल्प धारणकर, न लौटनेके लिये चला गया। दूर-प्रयास किया था। उनके दर्शन महर्षि विश्वामित्रकी दूर बैठे नरांतक और अहिरावण आमन्त्रित किये गये। यज्ञशालाके द्वारपर किये थे। न्यायकी दृष्टिसे उद्धारका दूर-दूर चले गये। जब कोई शेष नहीं बचा तो स्वयं जहाँ प्रथम अधिकारी था, वहीं राजनैतिक दुष्टिसे युद्धभूमिमें आया। प्रभुके नेत्रोंसे नेत्र मिले। उनमें याचना थी कि भयमुक्त होनेके लिये उससे सर्वप्रथम मुक्त होना परमावश्यक 'आपकी त्रिभुवनमोहिनी रूपमाधुरी मेरे नेत्रोंका विषय था। यह यदि जीवित रहेगा तो राक्षसोंमें श्रीरामके बल-पौरुषका वर्णन किये बिना नहीं रहेगा। वे राक्षस अपनी बनकर भी मेरे वैरि-भावको प्रभावित न करे। विभीषणको तामसी प्रकृतिका तो त्याग नहीं कर पायेंगे किंतु लंकासे रणमें वीरगति प्राप्त करनेवाले राक्षसोंके श्राद्ध-तर्पणके भाग अवश्य जायेंगे। शान्त रह नहीं पायेंगे। असहाय लिये मैंने ही भेजा है। इसकी रक्षा करना। रक्षेश्वरके अवस्थामें मारे जायँगे। राक्षसोंका विश्वविदित पराक्रम रूपमें अजर-अमरकर, लंकाको धरतीसे लुप्त मत होने देना। उसके अस्तित्वकी रक्षा करना।' निन्दित होकर रह जायगा। अत: रक्षोद्धार-यज्ञमें प्रथम अपने मुकुटको बाँका करके, मस्तकका बेलपत्र आहुति इसीकी बने। सभी जानते हैं कि वह मारीचके पास गया। खिसकाकर समझा दिया कि 'भगवान् शंकरका यह मारीचने उसे लंका लौट जानेके लिये कहा, किंतू उसके दिव्य विग्रह जो लंकेश्वरका शिरोभूषण है, मेरे सामने क्रोधके सम्मुख विवश होकर अन्तमें रामके हाथों अपनी ही भावी लंकेश्वरके मस्तकपर प्रतिष्ठितकर, मेरे नयनोत्सव! मुक्तिका संकल्प लेकर स्वर्णमृग बना। उनके त्रैलोक्य-मुझे धन्य कर देना।' विमोहक रूपका ध्यान करता हुआ, अन्तिम समयमें अधर तो राम-रावणमेंसे किसीके नहीं हिले। मायावी दर्शनको अदम्य-लालसाको पूर्तिका हृदयमें विचार करता सीताका रहस्य जैसे माया और मायापतिके मध्यका हुआ, लोकातीत शृंगारसे सुसज्जित होते हुए, पतिके विषय रहा, उसी प्रकार यह संवाद भी केवल भगवान् शंकर साथ चितारोहण करनेको आतुर सुन्दरीके समान शृंगारपर ही जान सके। विश्व जाना तो तब जाना जब विश्वनाथने शृंगार करते हुए चल पडा। 'हा सीता, हा लक्ष्मण' का उसे प्रकट करना उचित माना। रावणका विचार— उद्घोष करके, प्रभुका स्मरण करता हुआ, उनके नेत्रोंमें होइहिं भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दुढ़ एहा॥ और अन्तमें उसके निष्कर्षके रूपमें कि-नेत्रोंसे समर्पण करते हुए, चला गया। सीताहरण हुआ। श्रीराम समुद्रपर सेत् निर्माणकर लंका आ गये। एक-एक तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥ —अत: जो निश्चय दृढ़तासे हृदयमें धारण किया, कर प्रहस्त-अकंपन-अतिकाय-मकराक्ष-विरूपाक्ष-कुम्भ-उसकी पूर्ति प्रभुके बाणोंको प्राण देकर, उस दानकी निकुम्भ आदिको सेना दे-देकर भेजता रहा। उनके दक्षिणाके रूपमें अपनी अर्जित कीर्ति प्रदानकर रावण अन्तके समाचार आते रहे। विलाप सुनता रहा। प्रलाप करता रहा। मनमें निर्धारित कार्य-कलापके अनुसार चला गया। रूपमाधुरीका परमासक्त, रूपमाधुरीसे अनासक्तके वेषमें जानेवाले अपने गुप्त भक्तके मस्तक धरतीकी एकके पश्चात् एकको भेजता रहा। इसी क्रममें एक दिन सोते हुए कुम्भकर्णको भी जगाकर अनन्त-निद्रा-धृलिमें प्रभुने भी नहीं गिरने दिये। नीलकण्ठके कण्ठका

भाग ९०

आभूषण बना दिया। खलनायक ही सही किंतु भारतीय

प्राप्तिके लिये भेज दिया। मेघनादने स्पष्ट कह दिया था।

संख्या ११] दयाका पुरस्कार संन्यासका अर्थ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) 'ममता, कामना और तादात्म्यके त्यागका नाम ही प्रश्न—साधु माने क्या? संन्यास है। कपड़े रँगना और किसी सम्प्रदाय विशेषमें उत्तर—साधु संसारके बाहर चले तो नहीं जाते, दीक्षा लेना तो संन्यासका बाहरी चिह्न है। केवल बाह्य संसारसे सम्बन्ध अवश्य तोड देते हैं। चिह्न धारण करनेसे किसीकी मुक्ति नहीं होती।' शरीरको गंगामें तो नहीं फेंक देते, शरीरसे सम्बन्ध 'सही करना, कुछ न चाहना और प्रभुके शरणागत अवश्य तोड देते हैं। साधु माने यही कि जो संसारसे होना, यह योग, बोध, प्रेमकी तैयारी है और इसीसे योग, सम्बन्ध तोड दे, चाहे घरमें रहकर, चाहे वनमें जाकर। बोध, प्रेमकी प्राप्ति होती है।' साधु वह, जो किसीको हानि न पहुँचाये। जो प्रभुको 'जगत्से सम्बन्ध टूटकर उस अनन्तके साथ पसन्द करे। तुम मानव हो, प्रसन्नतापूर्वक रहो, दुखी मत अहंका सम्बन्ध जुड जानेका नाम ही 'योग' है। इसीसे रहो, खिन्न मत रहो, व्यर्थ चिन्तन मत करो, थोडे सब संकल्पोंकी निवृत्ति होती है और उस अनन्तको सब दिनका मेला है-सदा नहीं रहेगा। जगह सबमें देखना ही 'बोध' है। योगसे दोष और हे मानव! भेषके साधु सब नहीं हो सकते, लेकिन कामनाओंका त्याग होता है और उस अनन्तको अपना बिना भेषके साधु हर भाई, हर बहन हो सकती है। मानना एवं अहंको उनके समर्पित करना ही प्रेम है, यानी किसीको हानि मत पहुँचाओ। किसीको बुरा मत समझो और यथाशक्ति जिस परिवारमें, जिस समाजमें प्रेमकी प्राप्ति होती है। केवल गृहत्याग करने एवं वस्त्र रँगनेमात्रसे किसीको योग, बोध, प्रेमकी प्राप्ति नहीं हो रहते हो, उसके काम आओ। क्या यह जीवन सबको सकती। यह त्याग नहीं वरन् त्यागके भेषमें अपने नहीं मिल सकता ? मिल सकता है। तो साधु माने साधक कर्तव्यसे पलायन करना है।' है: क्योंकि— एक प्रश्न उठता है कि साधु माने क्या? इसकी (१) हमें संसारकी सेवा करना है। व्याख्या पूर्व प्रवचनमें निम्नलिखित रूपमें की गयी थी, (२) हमें प्रभुका प्रेमी होना है। जो इस क्रममें प्रासंगिक है-(३) हमें अचाह होना है। -दयाका पुरस्कार एक व्यक्ति शिकारके लिये जंगलमें गया। वहाँ उसने एक हरिनीको देखा, उसके साथ उसका छोटा बच्चा भी था। शिकारी दौड़ा, हरिनी तो डरकर जंगलमें छिप गयी, पर मृगशावक पकड़ा गया। शिकारी जब मृगीके उस बच्चेको लेकर चला, तब हरिनी भी निकल आयी और बच्चेके स्नेहवश वह भी पीछे-पीछे चलने लगी। शिकारीने कुछ दूर आनेके बाद पीछेकी ओर मुड़कर देखा, हरिनीकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह रही थी और वह पीछे-पीछे चली आ रही थी। शिकारी अपने गाँवके समीप आ गया था। तब भी हरिनी उसी प्रकार रोती चली आ रही थी। उसको दया आ गयी। उसने बच्चेको छोड़ दिया। बच्चा छूटते

ही छलाँग मारकर अपनी माँ (हिरनी)-के पास पहुँच गया। हिरनी मूक आशीर्वाद देती हुई बच्चेको लेकर लौट गयी। रातको शिकारीने स्वप्नमें देखा—कोई कह रहा है—'इस दयाके फलस्वरूप तुम्हें बादशाही

मिलेगी।' आगे चलकर यही व्यक्ति गजनीका बादशाह हुआ।

िभाग ९० गोमूत्रमें छिपे जीवनसूत्र 🔹 गाय जहाँपर खड़ी होती है, वहाँपर जो गोमूत्र 🛊 विद्युत्-तरंगें हमारे शरीरको स्वस्थ रखती हैं। गिरता है, उस जगहकी मिट्टीको खेतोंमें यूरियाकी तरह ये वातावरणमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूपसे विद्यमान हैं। गोमूत्रसे छींटनेसे यह यूरिया खादका एक बहुत अच्छा और प्राप्त ताम्र तत्त्व विद्युतीय आकर्षण गुणके कारण इनको सफल विकल्प है। शरीरमें आकर्षित करता है। 🛊 गोमूत्र १० गुना पानीमें मिलाकर फसलपर 🔹 अमेरिकाके डॉ॰ क्राफोड हेमिल्टन तथा छिड़कनेसे सम्पूर्ण खादकी पूर्ति हो जाती है। मेकिन्तोशने बहुत पहले ही यह सिद्ध कर दिया था कि 🔅 गायके मूत्रमें कार्बोलिक एसिड होता है, जो गोमूत्रके प्रयोगसे हृदय-रोग दूर होता है और मूत्र कीटाणुनाशक है, अतः शुद्धि और स्वच्छता बढ़ाता है। खुलकर आता है। 🛊 गोमूत्र शक्तिशाली कीटनाशक होनेके कारण 🛊 बेलफास्टके प्रो॰ सिमर्स तथा अल्म्टरके प्रो॰ फसलपर लगे कीटोंको भी छिड़काव करनेपर नष्ट कर कर्कने गोमुत्रके महत्त्वके विषयमें अनेकों प्रयोग किये हैं देता है। और उनका कहना है कि गोमूत्र रक्तमें रहनेवाले दूषित 🛊 गोमूत्र एक दिव्य औषध एवं कीट-नियन्त्रक है। कीटाणुओंका नाशक होता है। सजीव मांसपेशियोंके 🔹 उत्तरकाशीके निकट एक ग्राम है, जहाँ वर्षभर लिये यह हानि नहीं पहुँचाता, घावोंकी विषाक्तताको दूर गोमाताओंका गोमूत्र संचितकर पाण्डु मृत्तिका मिलाकर करता है और पुराने दोषसे रक्तद्वारा संक्रान्त घावमें बढ़ते घरोंकी पुताई होती है, जिसका प्रभाव तत्क्षण देखनेमें हए पीबको रोकता है। यह आया है कि उस स्थानपर छिपकली, मच्छर, मक्खी 🛊 डॉ॰ चाटी अपना अनुभव इस प्रकार बतलाते इत्यादि विषधारी जन्तु प्रवेश नहीं करते। हैं, चालीस वर्षकी अपनी नौकरीमें मैंने कितने ही 🛊 गोमुत्र विषैले प्रभावोंको दूर करनेवाला एक जलोदर रोगियोंका इलाज किया और पेट चीरकर २-प्रतिविष (एंटीडोट) है, विषनाशक (एण्टीटॉक्सिक) ३-४ बार भी पेटका पानी निकाल दिया, किंतु उनमेंसे है, रोगाणुनाशक (एंटीसेप्टिक) है, एन्टीबायोटिक है, अधिकांश रोगियोंकी मृत्यु हो गयी। मैंने सुना और घावमें पैदा होनेवाले पीव (पस)-को सुखाता है, आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें पढ़ा भी था कि इस रोगपर गोमूत्रका रोगावरोधक शक्तिको बढ़ाता है। गोमूत्रमें विटामिन 'बी' उपयोग बहुत लाभकारी होता है, फिर भी मुझे विश्वास तथा कार्बोलिक एसिड होता है, जो रोगाणुओंका नाश नहीं होता था। एक बार एक साधू-महात्माने गोमूत्रके करता है। गुणोंका बहुत वर्णन कर कहा कि इसका जलोदरपर बहुत ही अच्छा उपयोग होता है। मैंने गोमूत्रका प्रयोग 🛊 गोमूत्र रक्तमें बहनेवाले दुषित कीटाणुओंका नाश करता है।—डॉ० सिमर्स (ब्रिटेन) करके देखा तो विलक्षण लाभ हुआ। 🔹 किसी भी प्रकारकी औषधियोंकी मात्राका 🔹 भारतमें अबतक किये गये शोध-परिणामोंसे ज्ञात होता है कि गोमूत्रका उपयोग प्रतिजैविक तथा अतिप्रयोग हो जानेसे जो तत्त्व शरीरमें रहकर किसी प्रकारसे उपद्रव पैदा करते हैं, उनको गोमूत्र अपनी कैंसर उपचारकी औषधोंके निर्माणमें जैववर्धक (बायो-विषनाशक शक्तिसे नष्टकर रोगीको निरोगी करता है। इन्हान्सर)-की भूमिका कुशलतासे निभाता है। जैववर्धक 🛊 गोम्त्रमें ताँबा भी होता है, जो मानव शरीरमें पदार्थ उन्हें कहते हैं, जिनमें उपचार-क्षमता स्वयं जानेपर स्वर्णरूपमें परिवर्तित होता है, जो सभी प्रकारसे अपने-आप निहित नहीं होती, परंतु वे अन्य औषिधयोंमें विषनाशक है। अपनी उपस्थितिसे एक उत्प्रेरक (कैटलाइजर)-की

•	गोमूत्रमें छिपे जीवनसूत्र ४१		
भूमिका निभाते हुए उस औषध-विशेषकी जैव सक्रियता	चिकित्साका एक रूप है।		
और उपचार-क्षमताको वृद्धि प्रदान करते हैं। इसके	निद्नीके मूत्रको आँखोंमें लगानेसे राजा रघुको		
पूर्वतक ऐसे जैववर्धक पदार्थ केवल वनस्पतियोंसे प्राप्त	दिव्य नेत्रकी प्राप्ति हो गयी थी, जिससे चुराये हुए		
किये जाते रहे हैं। आसुत गोमूत्रके संयोगसे निर्मित	अश्वसिहत इन्द्र दिखायी देने लगे थे।		
प्रतिजैविक दवाओं (एण्टीबायोटिक)-की उपचार-क्षमतामें	सहदेवने राजा विराटसे कहा कि उत्तम लक्षणवाले		
५-७ गुणा वृद्धि स्थापित हो जाती है। कुछ औषिधयोंमें	उन बैलोंकी भी मुझे पहचान है, जिनके मूत्रको सूँघ		
यह वृद्धि ११ गुणातक हुई। कैंसर उपचारकी दवा	लेनेमात्रसे बन्ध्या स्त्री गर्भधारण करनेयोग्य हो जाती है।		
(टैक्साल)-में भी ५ गुणा क्षमता—वृद्धि पायी गयी है	🔅 इन्दौरके श्रीवीरेन्द्रकुमारजी जैनद्वारा पुन: स्थापित		
अर्थात् इन दवाओंकी कम खुराकसे ही स्वास्थ्य-लाभ	काऊ—यूरीन थिरेपीको भारत सरकारके पेटेंट विभागने		
मिलने लगेगा और साइड-इफैक्टमें कमी होगी।	वर्ष २००४ ई० के आरम्भमें पेटेंट प्रदान किया है।		
🔹 नियमित गोमूत्रपानसे दमेकी बीमारी ठीक हो	श्रीजैनने अपने प्रयासोंसे भारतमें बीस गोमूत्र-चिकित्सा		
जाती है।	एवं अनुसन्धान–केन्द्र स्थापित किये हैं।		
🔹 उत्तरांचलके अल्मोड़ा जिलेमें पिछले २०-२५	🔹 श्रीरेवाशंकरजी शर्माने अनेक असाध्य रोगोंसहित		
वर्षोंसे दूर-दराजके ग्राममें जनसमुदायकी चिकित्सामें	१०८ रोगोंपर गोमूत्रकी अनेक औषधियाँ बनाकर गोमूत्र		
सक्रिय डॉ॰ पाण्डेयका कथन है कि उन्होंने वहाँके कई	चिकित्सा शिविरोंमें प्रयोग करके गोमूत्रकी श्रेष्ठता सिद्ध		
ग्रामोंके ७० से ८० वर्षतकके वयोवृद्ध स्वस्थ नागरिकोंको	कर दी है।		
गायद्वारा मूत्र त्यागते समय उससे शरीर मलते, गरारा	🐅 भारतीय गायके गोमूत्रसे कामधेनु–वटी बनाकर		
करते तथा कुल्ला करनेके साथ-साथ हाथोंमें भरकर	१११ रोगोंका सफलतापूर्वक इलाज किया गया है।		
सीधे पीते हुए देखा है। डॉ० पाण्डेय-जैसे अनुभवी	🕏 गोमूत्र से भस्म, मावा, आसव, अर्क, वटी		
एलोपैथ-पद्धतिके प्रैक्टिशनरका सुस्पष्ट रूपसे कहना	बनाकर पचासों रोगोंकी चिकित्सा हो रही है।		
है, 'गोमूत्र–सेवन ही उनके स्वस्थ, निरोग तथा दीर्घायु	🕏 कलकत्तेके एक सज्जनने गोमूत्रको कड़ाहीमें		
रहनेका राज है।'	उबालकर, बचे द्रव्यकी गोली बनाकर इसका लाभ		
🔹 प० बंगालके पुरुलिया जिलेके ग्रामीण अंचलमें	मधुमेह-पीड़ित व्यक्तियोंको पहुँचाया।		
गाँवके वैद्यजी यह सलाह देते हैं कि 'बच्चेकी झाड़-	🕏 . 🕏 जिन महीनोंमें गाय दूध देती है, उस वक्त		
फूँक गायकी पूँछके अन्तमें उगे बालोंसे करो।' इसे	गोमूत्रमें लेक्टोज रहता है, जो हृदय और मस्तिष्कके		
अपनानेसे बच्चा ठीक भी हो जाता है। वस्तुत: गाय	विकारोंमें बहुत हितकारी है।		
(गोवंश)-द्वारा मल-मूत्र त्यागनेके दौरान उनके इन	🕏 क्षे गोमूत्र पूर्णत: निर्विष होनेसे हानिकारक नहीं है।		
बालोंमें गोबर-गोमूत्र निरन्तर लिपटते रहनेके फलस्वरूप	🕏 गोमूत्र आजीवन चिर गुणकारी होता है।		
उनमें उसकी सुगन्ध समायी रहती है और इसी सुगन्धके	 वैज्ञानिकोंने गोमूत्रके संयोगसे बैटरी सेलका 		
प्रभावसे रोग-निवारण हो जाता है। आयुर्वेदकी प्राचीन	निर्माण करके उसकी विद्युत्-अपघटनीय ऊर्जा		
सुगन्ध चिकित्सा-पद्धति भी है। वर्तमानमें एलोपैथी	(इलेक्ट्रोलिटिक ऊर्जा)-का उपयोग करते हुए घड़ी		
चिकित्सामें सर्दी-जुकाम, अस्थमा, मधुमेहके रोगियोंके	एवं कैलकुलेटरके प्रचलनका सफल प्रयोग किया है।		
लिये विभिन्न प्रकारके इन्हेलरोंका प्रयोग उसी सुगन्ध-	[संकलनकर्ता—श्रीप्रशान्तजी अग्रवाल]		
	MANUAL MINISTER - MANUEL 1		

साधनोपयोगी पत्र (१) करना चाहिये। त्याग और भगवदनुरागकी वृद्धि करनी

प्रेमके नामपर.... चाहिये। आपके पत्रसे पता लगता है कि आप लोगोंको ये बातें रुचती ही नहीं। आप तो कल ही नाश हो

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। उत्तर लिखनेमें कुछ देर हो गयी। इधर काम

भी ज्यादा रहा और स्वभावदोष तो है ही। क्षमा कीजियेगा।

आपने अपने मनकी हालत बताकर मेरी सम्मति पूछी, सो इस सम्बन्धमें मैं क्या कहूँ ? यदि आपके मनमें पवित्रता है और उधरसे भी कोई विकार नहीं है तो बहुत

ही अच्छी बात है, परंतु जहाँतक मैं समझ सका हूँ— इस स्पष्टोक्तिके लिये आप क्षमा कीजियेगा—आप

लोगोंका प्रेम पवित्र नहीं है। जिस प्रेममें भोग-सुखकी इच्छा है, संयमका अभाव है, कर्तव्य-विमुख होकर केवल पास रहने या देखते रहनेकी ही चेष्टा है, जरा

भी मानसिक विकार है, स्वार्थ-साधनका प्रयास है और परस्पर पवित्रता बढ़ानेकी जगह इन्द्रिय-तृप्तिकी सुविधा

खोजी जा रही है, वह प्रेम कदापि पवित्र नहीं हो सकता। प्रेमका प्रधान स्वरूप है निज-सुखकी इच्छाका सर्वथा त्याग। भोगप्रधान पाशविक इन्द्रिय-सुखका प्रयास

तो पवित्र प्रेमके नामको कलंकित करनेवाला पाप है। प्रेम सदा देता ही रहता है, जरा भी बदला नहीं चाहता। असलमें जिस प्रेमके आधार भगवान् नहीं हैं—वह

यथार्थ प्रेम नहीं है। प्रेम सदा स्वार्थशून्य है, इन्द्रियविकाररहित पवित्र है, भोगेच्छाके लिये उसमें स्थान नहीं। आजके मनुष्यने तो मोहको ही प्रेमका नाम

दे रखा है और इसीका फल है महान् मानसिक अशान्ति और दारुण दु:खभोग।

पवित्रता, पुण्य और सदाचरणकी उन्नतिमें सहायक होना

जिनका परस्पर पवित्र प्रेम है, उनको परस्पर

भलाई है। नहीं तो प्रेमके नामपर कामके कलुषित नरक-

कुण्डमें जा गिरियेगा। सावधान! शेष प्रभुकृपा।

चारिग्येduiबरूपिiss्तरावर्ष्ट्रिक्प्प्रिशक्षिक्षक्षेत्र प्रिक्षिक्ष्यक्षेत्र प्रक्रिक्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र

असली सद्गुण प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। नाटकमें पार्ट करनेकी तरह किये जानेवाले दिखावटी सत्य, अहिंसा, अक्रोध, क्षमा, ब्रह्मचर्य, दया आदिसे कुछ भी नहीं

होता। उसी प्रकार नाटकीय ज्ञान, वैराग्य, भक्ति और प्रेम भी निरर्थक ही हैं। जैसे नाटकका राजा वस्तुत: वैसा नहीं है। मुझको अच्छा बोलना—लोगोंको समझाना आ गया। बड़ी-बड़ी ऊँची बातोंका उपदेश भी मैं करने

लगा, परंतु यदि मैं स्वयं उनका मर्म नहीं समझा और मेरे जीवनमें उन ऊँची बातोंने प्रवेश न किया तो मुझे क्या लाभ हुआ? धनके झूठे आडम्बरसे कोई धनी

जानेवाली चमड़ीके रूपपर और काल्पनिक गुणोंपर

मोहित हैं। कुछ ही कालमें यदि ये गुण न दिखायी दें

तो आपका प्रेम कच्चे सूतके धागेकी तरह टूट जा सकता है। यह भी कोई प्रेम है? प्रेम कभी टूटता ही नहीं।

घटता भी नहीं। जितना है उतना ही नहीं रहता—वह

तो प्रतिक्षण बढता ही रहता है। उसमें रूप-गुणकी

अपेक्षा नहीं है, वह तो प्रेमस्वरूप अच्युत परमात्माकी

पवित्र देन है। आप इस मोहका त्याग कीजिये, इसीमें

(२)

थोड़े ही हो गया? अतएव जीवनमें सात्त्विक गुणोंका

और भक्ति, वैराग्य, ज्ञानका सच्चा विकास होना चाहिये। बड़ी लगनसे ऐसी चेष्टा करनी चाहिये। यह होता है-दूसरोंके दोष न देखकर उनके गुण देखनेसे, अपने अवगुण देखनेसे और जी-जानसे अपने अवगुणोंको

साधनोपयोगी पत्र संख्या ११] करनेसे। लोग दूसरोंके दोष देखते हैं, अपने नहीं ग्लानिके खुशी-खुशी जूए, शराब, परनिन्दा, परदोष-देखते—फल यह होता है कि अपने अन्दर दोष आ-दर्शन और दूसरोंको ठगने और कष्ट पहुँचानेमें बीतें, आकर भरते चले जाते हैं। सारे सद्गुण हमारे व्यवहारमें यह कैसी भक्ति है, कुछ समझमें नहीं आता। यह सत्य उतर आने चाहिये। बहुत बार आदमी भूलसे व्यावहारिक है कि इससे अधिक पाप करनेवालोंको भी भगवन्नाम-सत्तामें दोषोंका रहना अनिवार्य मानकर, युक्तिपूर्वक कीर्तन और भक्ति करनेका अधिकार है, भगवान्का द्वार दोषोंका समर्थन करने लगता है, यह मनका बड़ा पापियोंके लिये बन्द नहीं है तथा भगवन्नाम और धोखा है। दोषका समर्थन किसी भी रूपमें नहीं करना भगवद्भक्तिसे पापी भी शीघ्र पुण्यात्मा-महात्मा भी बन चाहिये और अपने एक-एक दोषको दुःसह समझकर सकते हैं; परंतु जिनके मनमें बुरे कर्मोंसे जरा भी ग्लानि उसका त्याग करना चाहिये। सद्गुण और सद्व्यवहार नहीं और जो इसीलिये भगवन्नाम लेते हैं कि उनके केवल कथनमात्र न होकर क्रियात्मक होने चाहिये और पाप ढके रहें या पाप करनेमें उन्हें सुविधा मिल जाय, प्रत्येक प्रतिकूल अवसरपर सावधानीके साथ डटे रहना उनके लिये बहुत विचारणीय बात है। यह सत्य है कि चाहिये। जिससे सद्गुण और सद्व्यवहारका अभाव न भगवन्नामकी पाप-नाश करनेकी शक्ति पापीके पाप हो जाय। धर्मकी परीक्षा काम पड़नेपर ही होती है। करनेकी शक्तिसे कहीं अधिक है और अन्तमें उसके एकान्तमें सच्ची भक्ति हो, वही भक्ति है। सत्य और पापोंका नाश करके भगवन्नाम उसे तार देगा, परंतु अहिंसा-जीवनमें उतरे रहें, वही सच्चे सत्य और जान-बूझकर पाप करनेके लिये ही नाम लेना अहिंसा व्रत हैं। शेष प्रभुकृपा। भगवद्भक्तिका आदर्श क्योंकर माना जा सकता है ? मेरा तो यह विश्वास है कि जो लोग भगवान्की सच्ची (3) भगवद्धक्ति और दैवी सम्पत्ति भक्ति करते हैं, उनमें मनका निग्रह, इन्द्रियोंका वशमें प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र होना, अहिंसा, सत्य, सेवा, क्षमा, परदु:ख-कातरता, मिला। भगवानुके नाम और भगवद्भक्तिकी महिमा मैत्री, दया आदि गुण क्रियात्मकरूपमें प्रत्यक्ष आ जाते अनन्त है। आप और हम तो क्षुद्र हैं-महापुरुष भी हैं और इनके आनेपर ही भक्ति आदर्श मानी जाती है। इनकी महिमा पूरी-पूरी नहीं गा सकते, परंतु भाई अतएव मेरी तो आपसे प्रार्थना है कि आप भक्तिके साहब! आप जिस ढंगसे भक्ति और भगवन्नामका साथ उसकी चिरसंगिनी—जिसके बिना भक्ति रह नहीं माहात्म्य बतलाते हैं, वह मुझे पसन्द नहीं है। मैं तो सकती—दैवी सम्पत्तिका भी पूरा आदर करें, तभी मानता हूँ, भगवन्नामसे पापका लेश भी नहीं रहता। भक्तिका यथार्थ विकास होगा और तभी तुरंत शान्ति फिर यह कैसे स्वीकार करूँ कि भगवन्नामका सहारा मिलेगी। यह याद रखना चाहिये कि भगवद्भिक्तिके लेकर दुष्कर्म करते रहना—जान-बूझकर भी उनसे बिना दैवी सम्पत्ति प्राणहीन है और दैवी सम्पत्तिके हटनेका प्रयास और अभिलाषा न करना उचित है? भक्ति नहीं होती। इन दोनोंका परस्पर मेरी समझसे भगवद्धक्तिके साथ दैवी सम्पत्तिका अनिवार्य अन्योन्याश्रयसम्बन्ध है। भगवद्भक्तमें कैसे गुण होने संयोग है। कोई भगवद्भक्त भी बने और बेरोक-टोक चाहिये, इसका विशेष विवरण गीतामें भगवान्ने बतलाया

व्यभिचार और परधन-हरण भी करता रहे। घण्टे, आध घण्टे कीर्तन कर ले और दिन-रात विना किसी है। इसे बारहवें अध्यायके १३वें से २०वें श्लोकतक

देखना चाहिये। शेष प्रभुकृपा।

कल्याण

व्रतोत्सव-पर्व

प्रतिपदा सायं ५।३२ बजेतक मंगल कृत्तिका दिनमें ३।४८ बजेतक १५ नवम्बर

चतुर्थी 🔐 ११। ७ बजेतक | शुक्र | आर्द्रा 💛 ११। २९ बजेतक | १८ 🙌

पंचमी 🔐 ९। २९ बजेतक | शनि | पुनर्वसु 🙌 १०। ३३ बजेतक |१९ 🕠

पुष्य

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, शरद्-हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष नक्षत्र दिनांक

रोहिणी '' २।१२ बजेतक १६ ''

मृगशिरा '' १२।४४ बजेतक १७ 🕠

" ९।५७ बजेतक २० "

१११०।६ बजेतक २२ 🕠

आश्लेषा 🕶 ९ । ४७ बजेतक | २१ 😘

पु० फा० '' १०।५४ बजेतक | २३ ''

उ०फा० 🗤 १२।१३ बजेतक |२४ 🕠

हस्त '' १।५९ बजेतक २५ ''

स्वाती रात्रिमें ६। ३७ बजेतक २७ 🕠

चित्रा सायं ४। १० बजेतक रि६

सोम विशाखा 🗥 ९। १३ बजेतक २८

नक्षत्र

ज्येष्ठा रात्रिमें २।११ बजेतक

पु० षा० रात्रिशेष ५ ।५६ बजेतक

उ० षा० प्रात: ७।९ बजेतक

श्रवण दिनमें ७। ४९ बजेतक

शतभिषा प्रात: ७।४३ बजेतक

पू० भा० प्रातः ७। २ बजेतक

रेवती रात्रिमें ४। ४१ बजेतक

अश्विनी रात्रिमें ३।१० बजेतक | १० 🗤

भरणी '' १। ३२ बजेतक ११ ''

कृत्तिका '' ११।५० बजेतक | १२ ''

धनिष्ठा ११८।० बजेतक

उ० षा० अहोरात्र

ग ४। १७ बजेतक

रात्रिमें ८।८ बजे।

शनिप्रदोषव्रत ।

श्रीरामविवाह।

प्रदोषव्रत।

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋत्, मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष

दिनांक

३०नवम्बर

१ दिसम्बर

२ "

3 "

8 11

4 "

ξ "

9 11

6 11

9 11

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

कर्कराशि रात्रिमें ४।४७ बजेसे।

धनुराशि रात्रिमें २। ११ बजेसे।

ज्येष्ठानक्षत्रका सूर्य रात्रिमें ४। १० बजे।

मूल रात्रिमें ४। १७ बजेतक।

भद्रा रात्रिमें १०।५ बजेसे।

समाप्त रात्रिमें ४। ४१ बजे।

वृषराशि दिनमें ७। ६ बजेसे।

श्रीगीता-जयन्ती, मूल रात्रिमें ३।१० बजेतक।

मुल रात्रिशेष ६ बजेसे।

भद्रा रात्रिमें २।९ बजेसे, मिथुनराशि रात्रिमें १।२८ बजेसे, वृश्चिक संक्रान्ति सायं ५।५७ बजे, हेमन्तऋतु प्रारम्भ।

भद्रा दिनमें १। ३ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय

अनुराधाका सूर्य रात्रिमें १२।५८ बजे।

भद्रा दिनमें ८। १४ बजेसे रात्रिमें ७। ४९ बजेतक, मूल दिनमें

९।५७ बजेसे। सिंहराशि दिनमें ९। ४७ बजेसे।

सायन धनुराशि का सूर्य दिनमें २।१९ बजे, मूल दिनमें १०।६ बजेतक।

भद्रा दिनमें ७। ५५ बजेतक।

भद्रा रात्रिमें ७। ३४ बजेसे, कन्याराशि सायं ५। १३ बजेसे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें १०। १८ बजेसे रात्रिमें १०। ४३ बजेतक, **मकरराशि**

कुम्भराशि रात्रिमें ७। ५५ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ७। ५५ बजे।

भद्रा रात्रिमें ४। ३२ बजेसे, मेषराशि रात्रिमें ४। ४१ बजेसे, पंचक

भद्रा दिनमें ३। २९ बजेतक, मोक्षदाएकादशीव्रत (सबका),

भद्रा दिनमें ८। ३३ बजेसे रात्रिमें ७। २४ बजेतक, पूर्णिमा।

भद्रा दिनमें ९। ३१ बजेतक, मीनराशि रात्रिमें १। ११ बजेसे।

दिनमें १२। १४ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।

तुलाराशि रात्रिमें ३। ५ बजेसे, उत्पन्नाएकादशीव्रत (सबका)। भद्रा दिनमें १२। ३७ बजेसे रात्रिमें १। ४१ बजेतक। वृश्चिकराशि दिनमें २। ३४ बजेसे। भौमवती अमावस्या, मूल रात्रिमें ११। ४८ बजेसे।

तिथि

द्वितीया दिनमें ३।१३ बजेतक बुध

तृतीया "१। ३ बजेतक गुरु

षष्ठी 🦙 ८।१४ बजेतक रिव

सप्तमी प्रातः ७।२३ बजेतक सोम

नवमी 🔑 ७।१२ बजेतक

दशमी दिनमें ७।५५ बजेतक

एकादशी 🕖 ९ । ४ बजेतक

द्वादशी 🥠 १०।४२ बजेतक

त्रयोदशी <table-cell-rows> १२। ३७ बजेतक

चतुर्दशी दिनमें २ ।४४ बजेतक

तिथि

प्रतिपदा रात्रिमें ६।५३ बजेतक बुध

द्वितीया '' ८। ३६ बजेतक गुरु

तृतीया 🕶 ९।५२ बजेतक शुक्र

चतुर्थी 😗 १०।४३ बजेतक शनि

पंचमी ''११।१ बजेतक रिव

षष्ठी 🕠 १०। ४७ बजेतक सोम

दशमी सायं ५।३५ बजेतक शुक्र

एकादशी दिनमें ३। २९ बजेतक 🛮 शनि 🖡

त्रयोदशी 😗 १०। ५३ बजेतक 🔣 सोम 🖡

सप्तमी ग १०।५ बजेतक

अष्टमी 🗤 ८। ५७ बजेतक

नवमी 🗤 ७। २६ बजेतक

द्वादशी 😗 १ । १४ बजेतक

पूर्णिमा रात्रिशेष ६। १५ बजेतक

अष्टमी 🔑 ७।३ बजेतक मंगल मघा

बुध

गुरु

शुक्र

शनि

रवि

वार

मंगल

बुध

गुरु

रवि

चतुर्दशी प्रात: ८। ३३ बजेतक मिंगल रोहिणी ११ १०। १२ बजेतक | १३ ११

अमावस्या सायं ४।५४ बजेतक मिंगल अनुराधा ११ ११ । ४८ बजेतक २९ 🕠

मूल

व्रतोत्सव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व णायन, हेमन्त-ऋतु, पौष कृष्णपक्ष

सं० २०७	३, श	क १९३८,	सन् २	०१६,	सूर्य	दक्षिए
तिथि	वार	नक्षत्र		दिनां	क	

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि मृगशिरा रात्रिमें ८।४१ बजेतक १४दिसम्बर प्रतिपदा रात्रिमें ४।८ बजेतक बुध मिथुनराशि दिनमें ९। २७ बजेसे। धनुसंक्रान्ति रात्रिशेष ६। ० बजे, खरमासारम्भ। आर्द्रा 😗 ७। २३ बजेतक द्वितीया " २। १३ बजेतक गुरु १५ ,, भद्रा दिनमें १। २६ बजेसे रात्रिमें १२। ३९ बजेतक, कर्कराशि तृतीया 🕖 १२।३९ बजेतक 🛭 शुक्र पुनर्वसु 😗 ६। २१ बजेतक | १६ 🕠 दिनमें १२। ३७ से। सायं ५। ४१ बजेतक १७ 🕠 संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीवृत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८। ५२ बजे, मूल सायं

पुष्य रवि आश्लेषा 🕶 ५ । २४ बजेतक | १८ 🕠

पंचमी 🕖 १०।३८ बजेतक

संख्या ११]

चतुर्थी 🕖 ११। २६ बजेतक 🛮 शनि सोम षष्ठी 🤊 १०।२० बजेतक मघा

सप्तमी 🕖 १०। ३३ बजेतक मंगल

😗 ५।३६ बजेतक १९ 😗 बुध

पु० फा० रात्रिमें ६। १८ बजेतक २० अष्टमी '' ११। १९ बजेतक नवमी 🛷 १२।३० बजेतक गुरु हस्त

दशमी 🖙 २ । १० बजेतक चित्रा शुक्र

उ० फा० ११७। ३० बजेतक | २१

एकादशी 🗤 ४। ७ बजेतक शनि

रवि द्वादशी रात्रिशेष ६।१६ बजेतक सोम अनुराधा अहोरात्र २६ ,, मंगल अनुराधा प्रातः ६ । ५२ बजेतक । २७ 🕠

त्रयोदशी अहोरात्र ज्येष्ठा दिनमें ९।१९ बजेतक |२८) 🕠 बुध गुरु मूल 😗 ११।२९ बजेतक |२९ 🕠

चतुर्दशी ः १०।२४ बजेतक अमावस्या*ः* १२ ।६ बजेतक

तिथि वार नक्षत्र

प्रतिपदा दिनमें १। २१ बजेतक शिक्र द्वितीया 😗 २।९ बजेतक | शनि | 🗤 ३। २२ बजेतक तृतीया 😗 २। २३ बजेतक रिव श्रवण

धनिष्ठा 🗤 ३।४१ बजेतक शतभिषा 🕶 ३। ३० बजेतक

चतुर्थी 꺄 २।७ बजेतक |सोम | पंचमी '' १। २२ बजेतक मंगल| षष्ठी ''१२।१२ बजेतक बुध

अष्टमी 🗤 ८। ४६ बजेतक

नवमी रात्रिशेष ६।४० बजेतक दशमी रात्रिमें ४। २४ बजेतक शिनि 🛭

एकादशी 😗 २। ३ बजेतक

द्वादशी ''११।४२ बजेतक सोम

त्रयोदशी 🕠 ९। २६ बजेतक मंगल

चतुर्दशी 😗 ७। २० बजेतक बुध

पूर्णिमा सायं ५।२६ बजेतक राुरु

पू० भा० ११ २।५४ बजेतक सप्तमी ** १०।४० बजेतक | गुरु उ० भा० ११ १। ५९ बजेतक

शुक्र

रवि

पू० षा० दिनमें १।१६ बजेतक उ० षा० 🗤 २। ३५ बजेतक

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६-२०१७, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष

त्रयोदशी दिनमें ८।२५ बजेतक

स्वाती '' १।३९ बजेतक २४ '' विशाखा '' ४। १५ बजेतक २५ 🕠

रेवती 📅 १२।४३ बजेतक

अश्विनी 🗤 ११। १५ बजेतक

भरणी 😗 ९।३८ बजेतक

कृत्तिका प्रातः ७।५६ बजेतक

आर्द्रा

मृगशिरा रात्रिमें ४।४५ बजेतक १० 🗤

पुनर्वसु "२।१७ बजेतक १२ "

" ३। २३ बजेतक ११ "

११९। १० बजेतक | २२

,,

दिनांक

३१ "

2 "

3 "

8 11

4 11

ξ "

9 11

८ 11

9 "

,,

५।४१ बजेसे।

१०। १३ बजेसे। सोमप्रदोषव्रत।

११। २९ बजेतक।

३०दिसम्बर **मकरराशि** रात्रिमें ७। ३६ बजेसे।

रिवयोग दिनमें ३।३० बजेसे।

मीनराशि दिनमें ९। ३ बजेसे।

मूल दिनमें ११। १५ बजेतक।

सूर्य दिनमें ७। ३४ बजे।

भद्रा दिनमें १। २० बजेसे रात्रिमें २। १० बजेतक, तुलाराशि दिनमें सफला एकादशीव्रत (सबका)। वृश्चिकराशि रात्रिमें ९। ३६ बजेसे।

सिंहराशि सायं ५। २४ बजेसे।

धनुराशि दिनमें ९। १९ बजेसे, श्राद्धकी अमावस्या।

सायन मकरराशिका सूर्य रात्रिमें १। ३ बजे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

१जनवरी जनवरी २०१७ प्रारम्भ, भद्रा रात्रिमें २।१५ बजेसे, कुंभराशि रात्रिमें

भद्रा दिनमें २। ७ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।

भद्रा दिनमें १०।४० बजेसे रात्रिमें ९।४३ बजेतक, मूल दिनमें १।५९ बजेसे।

मेषराशि दिनमें १२।४३ बजेसे, **पंचक समाप्त** दिनमें १२।४३ बजे।

भद्रा दिनमें ३। १४ बजेसे रात्रिमें २। ३ बजेतक, वृषराशि दिनमें

भद्रा रात्रिमें ७। २० बजेसे रात्रिशेष ६। २३ बजेतक, उत्तराषाढ़ाका

कर्कराशि रात्रिमें ८। ३३ बजेसे, पूर्णिमा, माघस्नान प्रारम्भ।

३। ३२ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ३। ३२ बजे।

३। १३ बजेसे, पुत्रदा एकादशीव्रत (सबका)।

मिथुनराशि सायं ५। ३२ बजेसे, भौमप्रदोषव्रत।

भद्रा रात्रिमें १०। २० बजेसे, मूल सायं ५। ३६ बजेतक। भद्रा दिनमें १०। २७ बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें १२। ३६ बजेसे।

भद्रा दिनमें ८। २५ बजेसे रात्रिमें ९। २५ बजेतक, मूल प्रात: ६। ५२ बजेसे। अमावस्या, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रका सूर्य प्रात: ६। ५७ बजे, मूल दिनमें

कृपानुभूति

र्इश्वरीय कृपा

बात सन् १९४७ ई० की है, जब यह देश अँगरेजोंके

काफी था। पानी हमारे सीनेतक था और अग्रजके सहारा चंगुलसे मुक्त हुआ ही था। हम अपनी शैशवावस्थामें देनेपर भी अनुज पानीमें हिचकोले लेने लगा था। मल्लाहसे

थे। हमारे लिये आजादीसे तात्पर्य तिरंगा झण्डा लेकर काफी अनुनय-विनय की, परंतु वह टस-से-मस न हुआ और मौतके पलडेमें झुलते बालककी तुलनामें उसके लिये नावका किराया ज्यादा वजनदार था। नावमें सवार चालीस

थीनामुख्यां जान गुणां se er क कि न के निकास के अपने के प्राचीत कि कि स्वाची कि कि स्वाची कि कि स्वाचीत के अपने कि स्वचीत कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत के अपने कि स्वचीत कि स

टोलियोंके साथ-साथ नारे लगाते घूमना एवं आजादीके दीवानोंकी जय-जयकार करनामात्र था। उसी वर्ष घनघोर बरसात हुई। यमुनाके किनारे बसे हुए सभी नगरोंमें

जलप्लावनका दृश्य दृष्टिगोचर हो रहा था। उन्हींमेंसे एक शहरकी घटना है, जिसे यादकर आज भी रोंगेटे खड़े हो जाते हैं और सर्वशक्तिमान्के अस्तित्वका बोध होता है। उस समय मेरी और मेरे अनुजकी अवस्था

क्रमशः मात्र ११ एवं ८ वर्षकी थी। बाढ्का पानी नगरके निचले मोहल्लोंमें प्रवेश कर चुका था। बहुत आवश्यक काम होनेपर ही जलप्लावित सड़कमार्गको एकमात्र किश्तीद्वारा पार किया जाता था; क्योंकि बाढके पानीमें

तेज बहाव था, अत: भँवर पड़ रही थीं। हमारे विद्यालयसे लेकर लाल किलेतक एक ही नाव थी, जो सवारियाँ ढो रही थी। जहाँ वयस्कोंके मनमें जोखिमका संचार था, वहाँ अल्पवयस्कोंके लिये जलप्लावन और नावकी सैर मनको पुलकायमान करनेवाली थी।

हमारे भी बालमनमें आया कि क्यों न नावकी सैरका लुत्फ उठाया जाय। उन दिनों पिताश्रीसे दैनिक जेबखर्चके लिये इकन्नी मिलती थी। हम दोनों भाइयोंने अपनी-अपनी इकन्नी सहेजकर रख छोडी थी और अपनी लालसाको मूर्तरूप देनेके लिये व्यग्र हो रहे थे। अत: स्कूलकी छुट्टी

होते ही दोनों भाई अपने-अपने बस्ते अपने पडोसी सहपाठियोंके हवालेकर नावपर सवार हो गये और जेबमें पडी दोनों इकन्नियाँ मल्लाहको भेंट कर दीं। भेंट करते समय खयाल नहीं रहा कि वापसीके लिये भी दो इकन्नियोंकी

दरकार होगी। आह्लादकारी स्वप्नोंकी तन्द्रा तब टूटी, जब मल्लाहने वापसीके लिये सवारियाँ भरना शुरू कर दिया

और दोनों भाइयोंको अपनी नौकासे बेदखल कर दिया। नाव सवारियोंसे लदकर रवाना होने लगी और दोनों भाई नावके कंगूरे पकड़े-पकड़े पानीमें घिसटने लगे। अब नाव लाल किलेके किनारे-किनारे उस मुकामपर पहुँच चुकी

सहारा भी हाथसे जाता रहा। अब हम भ्राताद्वय नितान्त बेसहारा हो चुके थे। कहते हैं कि विपदाके समय सबसे बडा सम्बल परमात्माका होता है। माताश्रीसे गज और ग्राहकी पौराणिक कथा सुनी हुई थी। तभी आस्थाने जाग्रत् होकर परमात्माको चुनौती दी कि यदि यह कथा सच्ची है तो इस घड़ी वैसा ही चमत्कार क्यों नहीं होता और भाइयोंका

बिछोह क्यों कर रहा है ? आत्मप्रवंचनासे संतप्त यह विचार

मनको उद्वेलित कर ही रहा था कि एक बिलकुल खाली नाव जिसे कोई किशोर चला रहा था, जिससे मैं कर्तई

सवारियोंमेंसे किसी भी बन्देका दिल न पसीजा कि मात्र

एक आनेसे हलका हो जाय और डूबते बच्चोंको बचा

ले। मल्लाह इतना निर्दयी निकला कि नावको पकडे मेरे

एक हाथको भी झटककर अलग कर दिया। तिनके-सा

अपरिचित था, पहले मेरा नाम लेकर सम्बोधन किया फिर गर्दनतक डूब चुके अनुजको अपनी नावपर खींच लिया। में अभी भी अर्धचेतनावस्थामें था। मैं कब और कैसे नावपर बैठा और कैसे जलप्लावित मार्गको पारकर स्कूलतक वापस पहुँचा, मुझे स्वप्नवत् लगा। नावसे उतरनेके उपरान्त किशोरके प्रति कृतज्ञता प्रकट करनेके लिये मैंने गर्दन सीधीकर देखा तो कहीं कुछ नहीं था। पहलीवाली नाव अभी भी दूरीपर

थी और देखते-ही-देखते मय सभी सवारियोंके भँवरमें

फँस चुकी थी। मल्लाहने लाख कोशिश की, मगर चकरघिनी

हुई नाव स्थिर न हो सकी और उलट गयी। कुछ सवारियाँ

बह गयीं और कुछ गोताखोरोंद्वारा बचा ली गयीं। भ्राताद्वयने स्कूलके चौकीदारके कमरेमें जाकर अपने-अपने कपडे सुखनेतक इन्तजार किया और ईश्वरके चमत्कारका साक्षात्कारकर दोनों भाई घर पहुँचे। सहपाठियोंने एक नेक काम किया था कि घरवालोंको यथार्थसे परिचित नहीं कराया वरना बुजुर्गोंकी मारकी त्रासदी अलगसे भोगनी

• • • • •	पढ़ो, समझो और करो ४७				
पढ़ो, समझो और करो					
(१)	उसके जीवनमें कोई उतार-चढ़ाव नहीं था। सीधी				
पापकी कमाईसे पाप ही पनपता है	सपाट जिन्दगी थी उसकी। उसके अन्दर कोई आकांक्षा				
हमारा पैतृक घर उत्तर प्रदेशके जनपद मैनपुरीके	महत्त्वाकांक्षा भी नहीं थी। शहरमें दशहराका मेला				
मुहल्ला मोखमगंजमें स्थित था। चूँकि हमारे इस घरमें	लगता था तो वह उसमें भी कभी नहीं जाता था। जेलमें				
पहले कभी एक छापाखाना था, इसलिये पूरे मोहल्लेका	जैसे कोई कैदी रहता है, अपना जीवन काटता है, वैसे				
नाम ही 'छुपट्टी' पड़ गया था। हमारे दादाके परदादा	ही वह अपना जीवन काट रहा था। कभी भी किसी				
मुंशी कन्हैयालालजीने यह घर खरीदा था, इसलिये लोग	खोमचेवालेसे पैसे–दो–पैसेकी चीज नहीं खरीदकर खाता				
इसे 'कन्हैया–कुटीर' के नामसे जानते थे। हमारे घरके	था। बुझे-बुझे दीपक-जैसी उसकी जिन्दगी चल रही				
ही सामनेके मकानमें, सड़कके किनारे-किनारे चार-पाँच	थी। आश्चर्य तो इस बातका था कि वह कभी बीमार				
छोटे-छोटे कमरे थे, जिन्हें कोठरियाँ कहते थे। इन	भी नहीं पड़ता था। लोग उसपर तरस खाकर कभी-				
कोठरियोंमें कुछ लोग, जिनके परिवार नहीं थे, किरायेपर	कभी खानेके लिये खाना परोसकर दे जाया करते थे।				
रहते थे। खुद खाना बनाते थे, खाते थे और अपनी	× × ×				
जिन्दगी बसर करते थे। हमारे घरके ठीक सामनेवाली	एक दिन दुर्गू सबेरेसे उठा नहीं तो उठा ही नहीं।				
कोठरीमें एक अधेड़ व्यक्ति आकर रहने लगा था। उसने	उससे उठातक नहीं गया। दिन-पर-दिन उसका जर्जर				
अपना नाम दुर्गाप्रसाद बताया था, लेकिन लोग उसे	शरीर और जर्जर होता चला गया। अब तो उसने चिलम				
'दुर्गू' कहते थे।	पीना भी छोड़ दिया था। संसारमें उसका कोई नहीं				
दुर्गूका अपना कोई नहीं था। कमानेके नामपर तो	था—न वह किसीसे कोई बात ही करता था। अपनेको				
वह कुछ भी नहीं करता था। कभी कभार-बाल-	छिपाये-छिपाये रखता था। मानो कोई अवधूत हो। जैसे				
बच्चोंके लिये 'बुढ़ियाके बाल', सीटियाँ तथा छोटे-छोटे	कोई गुप्त-साधना करनेवाला कोई तान्त्रिक अघोरी हो।				
खिलौने लाकर बेचा करता था। शेष समय आरामसे	उसके चेहरेपर न कोई होलीपर अबीर-गुलाल				
पड़ा सोता रहता था। अपनेको बड़ा गरीब इंसान बताता	लगाता था, न दीपावलीपर कोई उसकी कोठरीमें दो				
था। इसलिये मोहल्लेवाले इसे तीज-त्यौहारोंपर खाना	दीपक ही जलाकर रखता था। अकेला चारपाईपर पड़ा				
खिला देते थे और दयावश कभी-कभी इनाम-इकराम	रहता था। ऐसा लगता था, मानो वह किसी संगीन				
एवं बख्शीश भी दे दिया करते थे।	जुल्ममें पकड़े जानेके डरसे भेष बदलकर कोई भागा				
जिस तरहसे कोई ला-इलाज बीमार व्यक्ति अपनी	हुआ मुजरिम हो। गुनहगार हो, जो अपनी शेष जिन्दगी				
जिन्दगीके दिन काटता है, 'दूर्गू' भी अपना जीवन इसी	किसी तरह अँधेरेमें बिता रहा हो। किसीको क्या पड़ी				
प्रकार काट रहा था। उसकी कोई इच्छा नहीं थी। न	है जो कोई उसमें दिलचस्पी ले। सभी उससे दूर-दूर ही				
उसे किसीने कभी पूजा-पाठ करते देखा था। न कभी	रहते थे।				
सैर-सपाटा करते देखा था, न उसको किसीने मनोरंजन	× × ×				
करते देखा था। उसका जीवन बुझे-बुझेसे दीपकके	एक दिन उससे उठा नहीं गया। टूटी-फूटी-सी				
समान था। कभी–कभी चिलम पी लेता था और खाँसता	चारपाईपर पड़े-पड़े ही उसने अपना दम तोड़ दिया।				
रहता था।	मोहल्लेके कुछ जागरूक सज्जनोंने उसके लिये अर्थी				

भाग ९० बनायी और उसे चन्दा एकत्रित करके शमशान ले छात्राओंको चोटें भी लगीं। निदान; पंखे उतरवाकर जाकर फूँक आये। स्टोर-रूममें रखवा दिये गये। उसके मरनेके बाद जब उसके घरकी चीजें देखी अब कार्यकारिणीकी मीटिंग यह जाननेके लिये गयीं तो लोगोंके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। जमीनके निश्चित की गयी कि आखिर ऐसी दुर्घटना हुई क्यों? पंखे बनानेवाली कम्पनीके कारीगर बुलाये गये। पंखे गड्टेमें लोहेकी एक सन्द्रकचीमें कुछ अशर्फियाँ, कुछ गहने, कुछ चाँदीके सिक्के, चाँदीके रुपये और कुछ बेश टाँगनेवाले टेक्नीशियन बुलवाये गये। सबकी जाँच-कीमती जेवरात मिले, जो काफी पुराने किस्मके मालूम पड़ताल हुई। नतीजा यह निकला कि पंखे तो ठीक हैं, टेक्नीशियन भी ठीक हैं, पर पंखोंकी खरीदारीपर जो धन होते थे। खर्च हुआ है, वह कहाँसे आया? इस तथ्यको जाननेके दुर्गूकी इस कीमती धरोहरपर लोग आश्चर्य कर लिये, यह मामला पुलिसको सौंप दिया गया। रहे थे और कह रहे थे कि इसके पास इतना धन था तो भी इसने इसका उपयोग अपने लिये क्यों नहीं किया? पुलिसकी इन्क्वायरी पूरे दो वर्ष चली, तब कहीं खैर, कुछ धनी-मानी सुनारोंको बुलवाकर उसके धनका जाकर बीस वर्ष पहलेका पुलिस-रिकार्ड मॅंगवाया गया। हिसाब-किताब लगाया गया। सुनारोंने उसके सारे उससे यह पता चला कि बीस-पच्चीस वर्षपूर्व दुर्गाप्रसाद धनका मोल पूरे ५० करोड़ रुपयोंका लगाया और नामका एक कुख्यात डाकू गायब हो गया था। हाथ-खरीदनेके लिये भी तैयार हो गये। पैरकी उँगलियोंके निशानोंसे पता चला कि 'दुर्गू' नामका यह व्यक्ति, जो अब वृद्ध हो गया था, बीस-पच्चीस मेरे परबाबा (मुन्शी महावीर प्रसाद पेशकार) उन वर्षपूर्व दुर्गाप्रसाद नामका डाकू था, जिसने यह सारी दिनों श्रीचित्रगुप्त इण्टर कॉलेज तथा श्रीचित्रगुप्त डिग्री रकम सरकारसे छिपाकर अपने कमरेकी जमीन खोदकर कॉलेजकी कार्यकारिणी समितिके मनोनीत प्रबन्धक उसमें एक पीतलकी बड़ी गंगालमें छिपाकर, उसपर तथा अध्यक्ष थे। स्कूल और कॉलेजकी सम्मिलित पत्थरका ढँकना लगाकर जमीनमें गाड़ रखी थी। यह मीटिंग आयोजित की गयी, जिसमें यह निर्णय लिया धन उसी गंगालमेंसे निकला था, जो गलत ढंगसे लूटा गया कि इस धनका क्या सदुपयोग किया जाय? कई गया था। दिनोंके वाद-विवादके बाद सर्वसम्मत्तिसे यह निर्णय जब यह समाचार समाचार पत्रोंमें छपा तब लोगोंने लिया गया कि मैनपुरी जनपदमें गर्मी बहुत पड़ती है और कहा कि पापकी कमाईसे पाप ही पनपता है, अत: छात्र-छात्राओंके लिये क्लास-रूममें 'सीलिंग-फैन' जिलाधिकारीके एक आदेशके अनुसार यह सारा धन नहीं हैं; अत: इस धनसे सबसे पहले हर क्लास-रूममें सरकारी खजानेमें जमा कर दिया गया। एक-एक बड़े साइजका 'सीलिंग-फैन' जो अच्छी बादमें, स्कूल-कॉलेजोंके कमरोंमें सीलिंग-फैन क्वालिटीका हो, लगवा दिया जाय। निर्णयका पालन फिरसे लगवाये गये, जो अबतक ठीक-ठाक चल रहे अविलम्ब हुआ। पर यह क्या? पंखोंकी क्वालिटी भी हैं। लोगोंका यह सोचना गलत नहीं था कि दुर्गू उत्तमोत्तम थी और पंखे टाँगनेवाले भी सिद्धहस्त थे, नामवाला यह आदमी कुख्यात डाकू दुर्गाप्रसाद ही था, पापसे लूटा गया जिसका सारा धन आखिर पाप करके सुपर टेक्नीशियन थे, पर पंखे जैसे ही चले, वैसे ही उनकी पंखुडियाँ उखड-उखडकर, इधर-उधर, तीव्रगतिसे ही शान्त हुआ। भगवान् बुद्धने यूँ ही तो नहीं कहा था कि शुद्ध आजीविका ही फलीभृत होती है। जो प्राणीकी गिरने लगीं। सबके सब हतप्रभ रह गये। कई छात्र-

पढो, समझो और करो संख्या ११] आत्माका उद्धार करती है। लोग सच ही कहते हैं कि नियमित सेवनसे शोथ और उदर रोगोंसे मुक्ति मिल जाती पापकी कमाईसे पाप ही पनपता है। —रसिक बिहारी मंजुल 🔹 पुनर्नवाकी पाँच-सात संख्यामें ली गयी पत्तियोंके साथ दो या तीनकी संख्यामें गोलमिर्चको पीसकर पुनर्नवाके अनुभूत प्रयोग पिलानेसे मूत्रकृच्छसे छुटकारा मिलता है। 🕏 पुनर्नवा पीलिया रोगकी अत्यन्त प्रभावकारी 🛊 पुनर्नवाकी पत्तियोंके ५ से १० मि०ली० स्वरसको औषधि है। पीलियामें पुनर्नवाके १० से २० ग्राम दूधमें मिलाकर पिलानेसे मूत्रकी रुकावट मिट जाती है। पंचांगके रसमें २ से ४ ग्राम हरड़का चूर्ण मिलाकर सेवन 🔹 पुनर्नवा पंचांग या केवल मूलके सुखे चूर्णकी तीन ग्राम मात्रा गरम पानीके साथ प्रयोगसे शोथ, कराना चाहिये। 🛊 लाल पुनर्नवाकी जड़ पीसकर पीनेसे पीलियासे मूत्रकृच्छ तथा हृदय विकारमें राहत मिलती है। मुक्ति मिल जाती है। 🛊 पुनर्नवाके पंचांग या केवल जड़के चूर्णको 🛊 गुर्देकी बीमारीमें पुनर्नवा पंचांगके १० से २० दूधके साथ लेनेसे शरीर पुष्ट होता है। ग्राम चूर्णका क्वाथ नियमित लेनेसे वृक्क सम्बन्धी 🔹 सफेद पुनर्नवाकी १०-२० ग्राम जडको रोगोंसे मुक्ति मिलती है। तंडुलोदकके साथ पीसकर देनेसे प्लीहावृद्धि नियन्त्रित 🛊 मुँहके छाले (निनांवां)-में पुनर्नवाकी जडको हो जाती है। गायके दूधमें पीसकर छालेपर लेप करनेसे मुखके छालेसे 🔹 पुनर्नवाके क्वाथके साथ कपूर और सोंठकी छुटकारा मिल जाता है। एक ग्राम मात्राके साथ सात दिनके सेवनपर आम वातसे 🛊 हृदय रोगमें पुनर्नवाकी पत्तियोंके सागके सेवनसे मुक्ति मिल जाती है। लाभ होता है। 🔹 सफेद पुनर्नवाकी जडको तेलमें पकानेके बाद 🛊 पुनर्नवाकी जड़के चूर्णमें शक्कर मिलाकर दिनमें उस तेलसे पैरकी मालिश करनेपर वात संकटसे मुक्ति दो बार लेनेसे शुष्क कॉससे छुटकारा मिलता है। मिल जाती है। 🛊 पुनर्नवा मूलके तीन ग्राम चूर्णमें ५०० मि०ली० 🔹 चातुर्थिक ज्वरमें सफेद पुनर्नवाकी जड़की दो ग्राम हल्दीका चूर्ण मिलाकर प्रात:-सायं खिलानेसे ग्राम मात्रा दुध या पानके पत्तेके रसमें सुबह-शाम दमासे मुक्ति मिलती है। सेवनसे लाभ मिलता है। 🔅 पुनर्नवा पत्रका १०० ग्राम स्वरस, २०० ग्राम 🔹 मूत्रमार्गमें संक्रमणसे पेशाबमें होनेवाली जलन मिश्री चूर्ण, १२ ग्राम पिप्पली चूर्ण इन तीनोंको मिलाकर और ज्वरसे छुटकारेमें पुनर्नवाका क्वाथ या चूर्ण अत्यन्त पकायें। जब चाशनी गाढ़ी हो जाय तो उसे बन्द बोतलमें प्रभावकारी है। भर लें। इस शरबतकी ४ से १० बुँद बच्चोंको दिनमें 🛊 पुनर्नवाके जड़का २ ग्राम चूर्ण दूधके साथ तीन बार चटानेसे बच्चोंकी खाँसी, श्वासरोग, अधिक नियमित छ: मासतक सेवन करनेपर आयु बढ़ती है तथा लारका बहना, जिगर बढ़ना और जिगरकी अन्य खराबी वृद्धावस्था तरुणाईमें बदल जाती है। एवं शीतके प्रभावसे मुक्ति मिलती है। 🔹 पुनर्नवा पुष्पको सुखाकर बने चूर्णकी एक ग्राम मात्रा तीन ग्राम मिश्री मिलाकर खानेके बाद ऊपरसे 🔅 पुनर्नवा मूलके चूर्णको चायके एक चम्मचकी मात्राके बराबर दो बार सेवन करनेसे मृदु विरेचन होता है। दूध पीनेसे बलवृद्धि होती है और प्रमेहसे छुटकारा 🛊 देशी गायके गोमूत्रके साथ पुनर्नवा मूलके मिलता है। - डॉ॰ दिलीप कुमार

काश्मीरके हिन्दू-नरेश अपनी उदारता, विद्वत्ता माताके समान है। जैसे किसी मूल्यपर, किसी प्रकार

देवमन्दिर बनवानेका संकल्प किया। शिल्पियोंको आमन्त्रण दिया गया और राज्यके अधिकारियोंको शिल्पियोंके आदेशोंको पुरा करनेकी आज्ञा हो गयी। शिल्पियोंने एक भूमि मन्दिर बनानेके लिये चुनी, परंतु उस भूमिको जब वे मापने लगे, तब उन्हें एक व्यक्तिने रोक दिया। भूमिके एक भागमें उस व्यक्तिकी झोपड़ी थी। उस झोपड़ीको छोड़ देनेपर मन्दिर ठीक बनता नहीं था। राज्यके मन्त्रीगण उस व्यक्तिको बहुत अधिक मूल्य देकर वह भूमि खरीदना चाहते थे; किंतु

वह किसी भी मूल्यपर अपनी झोपड़ी बेचनेको उद्यत नहीं

था। बात महाराजके पास पहुँची। उन न्यायप्रिय धर्मात्मा

राजाने कहा—'बलपूर्वक तो किसीकी भूमि छीनी नहीं

जा सकती। मन्दिर दूसरे स्थानपर बनाया जाय।'

महाराज चन्द्रापीड उस समय गद्दीपर थे। उन्होंने एक

शिल्पियोंके प्रधानने निवेदन किया—'पहली बात तो यह कि उस स्थानपर मन्दिर बननेका संकल्प हो चुका, दूसरे आराध्यका मन्दिर सबसे उत्तम स्थानपर होना चाहिये और उससे अधिक उपयुक्त स्थान हमें दूसरा कोई दीखता नहीं।' महाराजकी आज्ञासे वह व्यक्ति बुलाया गया। नरेशने उससे कहा—'तुम जो मूल्य चाहो, तुम्हारी

झोपड़ीका दिया जायगा। दूसरी भूमि तुम जितनी कहोगे, तुम्हें मिलेगी और यदि तुम स्वीकार करो तो उसमें तुम्हारे लिये भवन भी बनवा दिया जाय। धर्मके काममें विघ्न क्यों डालते हो? देवमन्दिरके निर्माणमें बाधा

डालना पाप है, यह तो तुम जानते ही होगे।' या भूमिका प्रश्न नहीं है। वह झोपड़ी मेरे पिता, पितामह पहुँचे और उन्होंने उससे भूमिदान ग्रहण किया।

और न्यायप्रियताके लिये बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। उनमेंसे आप अपना पैतृक राजसदन किसीको नहीं दे सकते, वैसे

ही मैं अपनी झोपडी नहीं बेच सकता।'

नरेश उदास हो गये। वह व्यक्ति दो क्षण चुप रहा और फिर बोला—'परंतु आपने मुझे धर्मसंकटमें डाल

दिया है। देवमन्दिरके निर्माणमें बाधा डालनेका पाप मैं करूँ तो वह पाप मुझे और मेरे पूर्वजोंको भी ले डुबेगा। आप धर्मात्मा हैं, उदार हैं और मैं हीन जातिका कंगाल मनुष्य हूँ, किंतु यदि आप मेरे यहाँ पधारें और मुझसे

मन्दिर बनानेके लिये झोपड़ी मॉॅंगें तो मैं वह भूमि आपको दान कर दूँगा। इससे मुझे और मेरे पूर्वजोंको भी पुण्य ही होगा।'

'महाराज इस हीन जातिके व्यक्तिसे भूमिदान लेंगे?' राजसभाके सभासदोंमें रोषके भाव आये। वे परस्पर काना-फूसी करने लगे।

उस समय बिना कुछ कहे विदा कर दिया; परंतु दूसरे

'अच्छा, तुम जाओ!' महाराजने उस व्यक्तिको

उसने नम्रतापूर्वक कहा—'महाराज! यह झोपड़ी दिन काश्मीरके वे धर्मात्मा अधीश्वर उसकी झोपड़ीपर

अमिनिक्रास्त्रभणेंगेंडेटिनिस्र अस्मि है https://disergy/dharma | MADE WITH LOVE BY Avanastryshi

श्रीगीता-जयन्ती

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति । तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥

सर्वभतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः। सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥ (गीता६।३०-३१)

'जो पुरुष सम्पूर्ण भूतोंमें सबके आत्मरूप मुझ वासुदेवको ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतोंको मुझ वासुदेवके अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता। जो पुरुष एकीभावमें स्थित होकर सम्पूर्ण भूतोंमें आत्मरूपसे स्थित मुझ सिच्चदानन्दघन वासुदेवको भजता है, वह योगी सब प्रकारसे बरतता हुआ भी मुझमें ही बरतता है।'

आजके इस अत्यन्त संकीर्ण स्वार्थपूर्ण जगत्में दूसरेके सुख-दु:खको अपना सुख-दु:ख समझनेकी शिक्षा देनेके साथ-साथ कर्तव्य-कर्मपर आरूढ़ करानेवाला और कहीं भी आसक्ति-ममता न रखकर केवल भगवत्सेवाके लिये ही यज्ञमय जीवन-यापन करनेकी सत्-शिक्षा देनेवाला सार्वभौम ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवद्गीता' ही है। इस ग्रन्थका विश्वमें जितना अधिक वास्तविक रूपमें प्रचार-प्रसार होगा, उतना ही मानव सच्चे सुख-शान्तिकी ओर बढ सकेगा।

मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (एकादशी), शनिवार, दिनाङ्क १० दिसम्बर २०१६ ई० को श्रीगीता-जयन्तीका महापर्व दिवस है। इस पर्वपर जनतामें गीता-प्रचारके साथ ही श्रीगीताके अध्ययन—गीताकी शिक्षाको जीवनमें उतारनेकी स्थायी योजना बननी चाहिये। आजके किंकर्तव्यविमूढ़ मोहग्रस्त मानवके लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है। इस पर्वके उपलक्ष्यमें श्रीगीतामाता तथा गीतावक्ता भगवान् श्रीकृष्णका शुभाशीर्वाद प्राप्त करनेके लिये नीचे लिखे कार्य यथासाध्य और यथासम्भव देशभरमें सभी छोटे-बड़े स्थानोंमें अवश्य होने चाहिये—

(१) गीता-ग्रन्थ-पूजन। (२) गीताके वक्ता भगवान् श्रीकृष्ण तथा गीताको महाभारतमें ग्रथित करनेवाले भगवान् व्यासदेवका पूजन। (३) गीताका यथासाध्य व्यक्तिगत और सामूहिक पारायण। (४) गीता-तत्त्वको समझने-समझानेके हेतु गीता-प्रचारार्थ एवं समस्त विश्वको दिव्य ज्ञानचक्षु देकर सबको निष्कामभावसे कर्तव्य-परायण बनानेकी महती शिक्षाके लिये इस परम पुण्य दिवसका स्मृति-महोत्सव मनाना तथा उसके संदर्भमें सभाएँ, प्रवचन, व्याख्यान आदिका आयोजन एवं भगवन्नाम-संकीर्तन आदि करना-कराना। (५) महाविद्यालयों और विद्यालयोंमें गीता-पाठ, गीतापर व्याख्यान, गीता-परीक्षामें उत्तीर्ण छात्र-छात्राओंको पुरस्कार-वितरण आदि। (६) प्रत्येक मन्दिर, देवस्थान, धर्मस्थानमें गीता-कथा तथा अपने-अपने इष्ट भगवान्का विशेषरूपसे

पूजन और आरती करना। (७) जहाँ किसी प्रकारकी अड़चन न हो, वहाँ श्रीगीताजीकी शोभायात्रा (जुलूस) निकालना। (८) सम्मान्य लेखक और किन महोदयोंद्वारा गीता–सम्बन्धी लेखों और सुन्दर किनताओंके द्वारा गीता–प्रचार करने और करानेका संकल्प लेना, तदर्थ प्रेरणा देना और (९) देश, काल तथा पात्र (परिस्थिति)–

ग्राहकोंसे आवश्यक निवेदन

के अनुसार गीता-सम्बन्धी अन्य कार्यक्रम अनुष्ठित होने चाहिये।

जनवरी २०१७ का विशेषाङ्क 'श्रीशिवमहापुराणाङ्क'-हिन्दी भाषानुवाद, श्लोकाङ्कसहित-प्रथम भाग, दिसम्बर २०१६ से ही भेजनेका प्रयास है। रिजस्ट्रीसे विशेषाङ्क प्राप्त करनेके लिये सदस्यता-शुल्क यथाशीघ्र भेजें।

गीताप्रेसकी दूकानोंपर भी सदस्यता-शुल्क छपी रसीद प्राप्त करके जमा कर सकते हैं। जिन ग्राहकोंका सदस्यता-शुल्क नवम्बरके अन्ततक प्राप्त नहीं होगा उन्हें बादमें वी०पी०पी०से विशेषाङ्क भेजा जायगा।

जनवरी सन् 2017 से 'कल्याण'-विशेषांक अजिल्द उपलब्ध नहीं होगा।

वार्षिक-शुल्क—₹२२० (सजिल्द)। पंचवर्षीय-शुल्क—₹११०० (सजिल्द)।

इंटरनेटसे सदस्यता-शुल्क-भुगतानहेतु gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय' पो०-गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५

-सम्पादक



प्र० ति० २०-१०-२०१६ रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकत संख्या—NP/GR-13/2014-2016

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2014-2016

```
गीता-दैनन्दिनी — (सन् २०१७) के सभी संस्करण उपलब्ध
```

डाकखर्च

पस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—गीता-मल, हिन्दी-अनवाद, मल्य ₹ ७० ₹ २५

,, (बँगला अनवाद **(कोड** 1489), ओडिआ अनवाद **(कोड** 1644),

मल्य₹७०₹२५ तेलगु अनुवाद (कोड 1714)

सन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सुक्तियाँ मूल्य ₹ ५५ ₹ २५ **पॉकेट साइज— प्लास्टिक आवरण (कोड 506)**— गीता-मुल श्लोक, मल्य ₹ ३० ₹ २०

व्यापारिक संस्थान नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रसारमें सहयोग दे सकते हैं।

[गीताप्रेसकी निजी थोक पुस्तक-दुकानोंसे थोक खरीदनेपर नियमानुसार डिस्काउण्ट भी उपलब्ध है। दकानोंका पता कल्याण मर्डके कवर पष्ठ ३ पर देखें।]

योग एवं आरोग्यपर तीन प्रमुख प्रकाशन—अब उपलब्ध

पातञ्जलयोग-प्रदीप (कोड 47) ग्रन्थाकार—श्रद्धेय श्रीओमानन्द महाराजद्वारा प्रणीत इस ग्रन्थमें

पातञ्जलयोग-सत्रोंकी व्याख्या तत्त्ववैशारदी, भोजवृत्ति तथा योगवार्तिकके अनुसार विस्तृत रूपसे की गयी है। इसमें उपनिषदों तथा भारतीय दर्शनोंके विभिन्न तत्त्वोंकी सुन्दर समालोचना है। सचित्र, सजिल्द। मुल्य ₹१७० योगाङ्क (कोड 616) ग्रन्थाकार—इसमें योगकी व्याख्या तथा योगका स्वरूप-परिचय एवं प्रकार और

योग-प्रणालियों तथा अङ्ग-उपाङ्गोंपर विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त इसमें अनेक योगसिद्ध महात्माओं और योग-साधकोंके जीवन-चरित्रका वर्णन है। मृल्य ₹२००

आरोग्य-अङ्क [संवर्धित संस्करण] (कोड 1592) ग्रन्थाकार—विभिन्न चिकित्सा-पद्धतियों, घरेल औषिधयों तथा स्वास्थ्यरक्षापर संगृहीत अनेक उपयोगी लेखोंका संग्रह है। मुल्य ₹२००

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित गोसेवापर पुस्तकें

[८ नवम्बर (दिन—मंगलवार) को गोपाष्टमी है।]

गो-अङ्क (कोड 1773)—इस विशेषाङ्कमें सुप्रसिद्ध संत-महात्माओं एवं विद्वानोंके द्वारा प्रस्तुत गायकी महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ-साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्व तथा गोपालन एवं संरक्षणकी विधियोंका सुन्दर प्रतिपादन किया गया है। मुल्य ₹१७०

गोसेवा-अङ्क (कोड 653)—इस विशेषाङ्कमें गौसे सम्बन्धित अनेक आध्यात्मिक और तात्त्विक निबन्धोंके साथ गौका विश्वरूप, गोसेवाका स्वरूप, गोपालन एवं गोसंवर्धनकी मुख्य विधाएँ तथा गोदान आदि उपयोगी विषयोंका संग्रह हुआ है। मृल्य ₹१३०

गोसेवाके चमत्कार (कोड 651)—गायोंकी महिमा अपार है। प्राचीनसे लेकर अर्वाचीन साहित्यतक गो-महिमासे भरे पड़े हैं। मूल्य ₹१५ (कोड 365) तमिलमें भी उपलब्ध।

किसान और गाय (कोड 821)—किसानोंके लिये व्यावहारिक शिक्षा और गोपालनकी महत्ताका एक सुन्दर विवेचन। मुल्य ₹४ (कोड 1547) तेलुगुमें भी उपलब्ध।

गोरक्षा एवं गोसंवर्धन (कोड 1922)—प्रस्तुत पुस्तकमें गोरक्षा एवं गोसंवर्धनकी शास्त्रीय आलोकमें

विलक्षण व्याख्या की गयी है। मुल्य ₹१०